लेडी डाक्टर

लक्ष्मी नारायण लाल

अजब थी वह लेडी डाक्टर जिसके शरीर
पर सदा बसंत था किन्तु उसके
भीतर प्रेम और त्याग का
पवित्र प्रकाष था।

•

रण–क्षेत्र का एक चित्र कर्नल साहब के ठीक सामने लगा था। चित्र में एक जोश लहरा रहा था, कमरे के मधुर–प्रकाश में वह चित्र अपनी कहानी कह रहा था, जिसे मि0 कर्नल ही सुन रहे थे। सूनी रात न बीतने वाली थी न उठी हुई पलकों में नींद आ रही थी। भूत से वर्तमान का संघर्ष चल रहा था। 'मैं इतना भयंकर और क्रूर था ! मेरी आज की ममता कहॉ थी ?' हृदय बार–बार पूछ रहा था। पर इसका उनके पास उत्तर न था। कुतूहल, जिज्ञासा से व्यथा बनकर पलकों में पैठ गया। पलकें गिर गईं। ऑसू छलक पड़े। तब तक घड़ी ने आश्वासन देते हुए कहा–'टन् ! टन !!'

कर्नल की तन्द्रा भंग हुई। व्यथित हृदय ने एक निःश्वास निकाला। वे उठने वाले थे, तब तक बगल के कमरे से वही कराहने की आवाज आई 'आह !' आह !!'

कर्नल साहब पागलों की भॉति दौड़ पड़े, उस आवास की ओर। ममता ऑसू बन कर छलक पड़ी उनका गला रूँध गया। वे आश्वासन क्या दें पत्नी को ? स्वयं उनकी दशा थी बच्चों की सी। सामने अँधेरा था। सुधा के पीले मुख को बार–बार वे देखते थे। इस आशान्त रजनी में वे कहॉ जायॅ ? किससे सहायता लें। महेन्द्र अपने कमरे में सो रहा था। कर्नल कभी उठते, कभी बैठकर हाथ मलते, कभी ऑसू गिराते हुये सुधा की पतली अँगुलियों को अपने हाथ में लेते हुए कहने लगते––'कैसी तबीयत है सुधा !'

पीड़ा के भार से प्रयत्न करने पर भी सुधा की पलकें ऊपर न उठीं। पति के उत्तर के लिए एक प्रयास हुआ, पर शब्द न निकला। हृदय ऑसू के रूप में ढलक पड़ा। कर्नल अपने को रोंक न सके।

•

मिस पंत शहर की लेडी डाक्टर थीं। उनका यश, हाथ का जादू सुदूर तक फैला था। उनकी रूप–राशि पर, क्या कहना है। शहर के कितने अफसर, रईस बिक चुके थे। उनकी प्रकृति भी कुछ ऐसी ही थी। यौवन की मधुमय मुस्कान, रूप, पद, सरलता, इत्यादि का सुन्दर सहयोग बन पड़ा था एक नारी में। उनकी अवस्था तीस साल से कम नहीं थी पर शरीर की बनावट, सुडौलपन, चपलता, रूप, कार्यशीलता आश्चर्य में डाल देती थी। फिर भी अभी तक वे अविवाहित थीं। लोग अपना सौभाग्य समझते थे जिधर उनकी ऑखें उठ जाती थीं। यह थीं रतनारी ऑखें और नारी का जादू। कितने अफसरों की याचनायें आती उन्हें अपना बनाने के लिए, पर वे कितने बार 'बर्नार्डशा' की उक्तियों को सामने रखकर बात काट चुकी थीं। क्लब का नित्य–जाना उनकी दिनचर्या में विशेष स्थान रखता था। कार रहते हुये भी वे अधिकतर

साइकिल पर ही क्लब जाती थीं। सांयकाल का यह अमूल्य समय वे किसी अन्य कार्यों के लिए न दे सकती थीं, यद्यपि वे थीं लेडी डाक्टर और उनके सर पर था इतना बड़ा सामाजिक कार्य ?

क्लब–हाल में आते ही कितने दिलों से 'काश' के निःश्वास निकलते थे। पर उनकी ऑख में जगत् का रूप आता जाता था, पर हृदय में अभी तक नहीं। वे कब से उस रूप, सम्मान, पद, वाले व्यक्ति की खोज में थीं, पर अब तक नहीं.....। इसके लिये उन्होंने कुछ उठा न रक्खा।

हॉ तो 'टेनिस' में उनका कमाल था। बिना इनके मि0 आर0 पी0 मेहरोत्रा खेलते ही न थे। विशेष कर क्लब की रॅगीली बैठकों में मिस पंत कितनी बार 'शादी–प्रथा' पर बोल चुकी थीं। इसी सिद्धान्त पर अटल वे आज तक अपनी दुनिया में अकेली थीं। मि0 मेहरोत्रा इससे और खिंचे थे। सिटी मजिस्ट्रेट होने के कारण उनका खूब सम्मान तथा रोब था शहर में। वे विचार के भी उदार थे। इसी से मिस पंत भी आज–कल कुछ खिंची थीं उस ओर। मि0 मेहरोत्रा के बॅगले पर अभी तक किसी–स्त्री का पैर नहीं पड़ा था, यह था सौभाग्य मिस पंत के लिए। दिन–रात मिस पंत के पीछे उनकी आस्टिन कार दौड़ती थी, उनके इशारे पर लुट जाते थे शहर के मजिस्ट्रेट। आज की रात कितनी सुहावनी है मि0 मेहरोत्रा के बॅगले में। रात के दस बज चुके हैं। बॅगले पर नौकर–चाकर, अर्दलियों के अतिरिक्त कौन कभी आया था इस जगह पर। आज बसंत स्वयं रूप धारण कर आया है। इनके ड्राइनिंग रूम में आज मि0 पंत बैठी हैं। उनके सामने, कितनी मधुमय बातें छिड़ी हैं !

अब तक आपने शादी क्यों नहीं की ?' मिस पंत ने मुस्कराकर कहा।

'आप को देखकर।' मि0 मेहरोत्रा ने छोटा–सा उत्तर दिया। चम्मच उठाते हुये ऑखें फैल गईं मिस पंत के सुन्दर मुख पर।

'आप बड़े अच्छे हैं ! सचमुच शादी विवाह तो एक बन्धन है। मानव बन्धन में क्या कर सकता है ?, स्वतंत्र जन्तु–वर्ग की देखिये, कितने स्वाधीन है।'

'सचमुच पर देखिये, एक ही बार वहॉ दीपक पर परवाना जल के खाक् हो रहा है, मि0 मेहरोत्रा ने ताकते हुये शमा की ओर इंगित किया। 'हॉ ! ठीक है, पर उस जलने में भी तो स्वतंत्रता है, बन्धन नहीं, दोनों हॅस पड़े, बॅगला गूॅज उठा। दस बज रहा है, रेडियो पर किसी का मधु–मय राग चल रहा है।

'छोड़ो इन सब नीरस बातों को। देखों, कितना सुन्दर गीत चल रहा है।

'हॉ ! पर.....।'

'पर क्या ? मि0 मेहरोत्रा ने पूछा,

'यही कि अब मैं चली, मिस पंत ने मन्द गति से कहा।

'क्यों ?'

'न जाने क्यों तबीयत नहीं लग रही है, एक अंगड़ाई लेते हुए मिस पंत ने कहा।

'अच्छा, कुछ ही देर और' उन्होंने एक याचना की।

उनके पैर सामने से ड्राइंग रूप की दाहिनी ओर चल पड़े और धॅस गई सामने के कोच में। मि0 मेहरोत्रा टेबिल खींचते हुये सामने आ गये। दोनों चुप थे।

'अच्छा, तब तक उसे लाइये,

अच्छा, मि0 मेहरोत्रा दौड़ पड़े,

'आज आप भी, मिस पंत ने प्याले में डालते हुये कहा 'परन्तु मैंने आज तक कभी नहीं.....।' यह तो आप के लिए रख लिया है। .....आप ही.....।'

'नहीं ! तभी तो मेरी तबीयत आज के यहॉ आज कल–नहीं लगती।'

नारी की केवल वक्र भृकुटि से सिटी मजिस्ट्रेट दहल गये।

हॅसता हुआ मुख–मण्डल गम्भीर हो गया। प्याला और उनका होठ.....छिः आज तक नहीं, कालेज, यूनीवसरटी, में बचता आया, पर आज का प्रश्न कितना टेढा था। उनकी तबीयत का प्रश्न है।

'पीलूॅ, दो घूॅट, बात ही क्या है ?''

'आज चुप क्यों है ?' मिस पंत ने पूछा।

'वैसे ही। आप पीजिये.....।

नहीं यह लीजिये। नहीं तो मैं.....।

'नहीं, नहीं । अच्छा थोड़ा–सा'

'कल् कल् कल् कल्'

'बस !'

'हॉ। मि0 मेहरोत्रा ने कहा।

'और मुझे देखिये'–मिस पंत ने यह कहकर उठा लिया अंगूरी प्याला। और पीकर हॅस पड़ी जोर से। मि0 मेहरोत्रा का सर घूम गया। कॉप गया उनका शरीर इतने ही के पीने से। कितना अन्तर था नर और नारी में !–

सबेरे के आठ बजे थे। जनाने अस्पताल में अभी भीड़ कम थी। मिस पंत रोगिनियों को एक एक करके देख रही थीं। सब के विषय में नर्स से कुछ न कुछ और करने के लिये कह दिया करती थीं। मिस पंत की यह लगन रोगी स्त्रियों के प्रति उनकी श्रद्धा का एक विशेष उदाहरण था, जोकि उनका एक विशेष गुण बन गया था। ऐसा सभी कहते थे ! बाहर, चारों तरफ अभी शान्ति थी, नीरवता थी हॉ कभी–कभी पट्टी खोलने, बॉधने में कोई स्त्री चिल्ला उठती थी बस। इतने के लिये शान्ति भंग होती थी। अभी बाहर की स्त्रियॉ दवा लेने के लिये नहीं आयी थीं। तब तक बाहरी दालान के सामने सनसनाती हुई कार रूकी।

नीरवता भंग हुई मिस पंत का ध्यान इधर बॅट गया। उन्होंने मुड़कर देखा। तब तक कर्नल आर0पी0 सिंह विह्वल बढ़े आ रहे थे मिस पंत की ओर। क्षण–मात्र में सामने हाथ जोड़कर खड़े हो गये, परन्तु व्यथा के प्रवाह में उनके मुख से याचना के शब्द तक न निकले।

क्या है ? कहिये ! मिस पंत ने कहा और आश्वासन देते हुए पूछा,

समय नहीं, आइये कार पर चलें.....मैं भीख मॉगाता हूॅ अपनी सुधा की'.....आगे उनका गला रूॅध गया। मिस पंत कुछ समझ न पाईं। पर कर्नल की दशा पर उन्हें अपार दया आ गई। उनका नारी हृदय पिघल गया। वे झट एक नर्स को साथ ले कार पर बैठ गईं। शहर से कुछ दूर मि0 कर्नल का आलीशान बॅगला था। क्षण भर में कार ब्रेक पर रूक गई। सुधा अपने कमरे में कराह रही थी 'आह !' वह अपनी पीड़ा में बेहाल थी। उसे ज्ञान नहीं था कि उसके सामने कौन है। मि0 कर्नल अपने को रोकते फफक पड़े। मिस पंत दंग रह गईं। ओह ! ममता का इतना वेग नवजवान कर्नल अभी रण–क्षेत्र से लौटे ही थे, उनका हृदय इतना कमजोर हो गया था। मिस पंत ने उन्हें धीरज देते हुये बाहर जाने के लिए कहा। सुधा को प्रसव पीड़ा थी। मिस पंत ने बहुत देर तक निरीक्षण किया फिर वहीं आराम कुर्सी पर बैठ गईं और हॅसते हुये मि0 कर्नल को पुकारा 'मिठाई खिलाइये, मिठाई।'

कर्नल चौंक पड़े। हृदय खिल गया। होंठ फैल गये दोनों ओर। ऑखों में बुझती हुई एक आभा आ गई। शरीर में स्पंदन हो आया। होंठों पर आशा की एक क्षीण रेखा खिची पर भीतर आते–आते वह परिणित हो गई निराशा में। 'क्या है ? मि0 कर्नल ने उत्सुकता से पूछा।'

'सब ठीक है। पर हॉ गर्भ में बच्चा बुरी तरह से टेढ़ा पड़ गया है। अब खुशी मनाने की शुभ घड़ी समीप ही है उसी कारण उनकी पीड़ा असह्य हो गई।

'गर्भ में बच्चा टेढ़ा।.....आह। बचाओ, मेरी सुधा को।'

'आप घबराइये नहीं। पर हॉ, इन्हें भरती करा दीजिये। भरती।.....और अपनी सुधा को।

कर्नल का हृदय धक् हो गया न जाने क्यों। इन्हें अपने ऊपर चिढ़ आती थी। उनकी सुधा अब अच्छी हो जायेगी। फिर क्यों वे इतने विकल थे ? यह उनका हृदय जाने–

'आप चुप क्यों है ?'

'नहीं मेरी सुधा, बस होश में आ ..... ।.....अच्छा.....पर।

कार से नर्स हास्पिटल आई, और सूचित की हुई वस्तुओं को लेकर आ गई। मिस पंत ने सूई लगायी। क्षण भर में सुधा की पीड़ा कम हुई, बेहोसी दूर हुई। फिर वही कराह की आवाज आयी 'आह ! आह ! कर्नल कूद उठे। ऑखों में आलोक फैल गया। महेन्द्र ने भर ऑख अपनी मृदुमयी मॉ को देखा,.....', 'यह है आप की फीस' मि0 कर्नल ने कृतज्ञता से कहा।

'अरे। यह नम्बरी नोट, मेरे लिये। नहीं, नहीं सुधा मेरी बहन है, और आह.....हॉ, पर कल तक इन्हें अवश्य भरती करा देना होगा।'

'भरती.....?'

हॉ, आप के लिए कोई बात न होगी। मैं हूँ, आप संतोष रक्खें–

'कितनी उदार भावना है ! इतनी ममता मेरी सुधा के प्रति और दया मेरे ऊपर' ! मि0 कर्नल मिस पंत के विचारों पर लुट गये। हृदय में आशा प्लावित हो गई। सारा शरीर प्रेम और सहानुभूति से स्पंदित हो गया। मन ने अभिवादन किया।

'मि0 कर्नल कितने सरल हैं ! ममता ने उन्हें कितना बच्चा बना दिया है ! कितना बड़ा भाग्य है सुधा का ऐसा पति पाने में ! कल तो मेरे पैरों पड़ रहे थे–क्यो ? अपनी सुधा के लिये और कोई अन्य कारण नहीं हो सकता। पर चाहे जो हो, कितना सुन्दर व्यक्तित्व है उनका। ओह, चमकता हुआ ललाट, उन्नत वक्षस्थल, गौर वर्ण फिर कितने सीधे हैं धन–सम्मान पाते हुये भी। पर क्या मैं कह दूँ कि वैवाहिक जीवन अच्छा है ? नहीं, सुधा को देखो कितनी तकलीफ हो रही है। पुरूष कितना जिम्मेदार है इस व्यथामय जीवन में ? उसकी वासना हमारी.....। पर यह तो नहीं है, मि0 कर्नल पागल हैं अपनी रानी के पीछे। सचमुच क्या दोनों राजा–रानी है ? पर इससे क्या ? मैं भी तो रानी हूँ अपने रूप और पद की। कितने लोग पॉवड़े बिछाते हैं मुझे रानी कहने के लिये। मि0 मेहरोत्रा सिटी मजिस्ट्रेट हैं, मि0 मित्त्ल जिलाधीष हैं, जे0 यू0 खान कप्तान हैं, मि0 निगम अपने हाथ के सिविल सर्जन हैं, सभी तो मुझे रानी, डालिंग कहने में अपनी मर्यादा समझते हैं। क्या मैं इनसे बढ़कर नहीं ? ओह ! मेरी रॅगीली दुनिया और स्वप्निल रातें, उन्हें कहॉ ? एक पुरूष पर जीवन दे देना कहॉ की बुद्धिमानी है ? क्या पुरूष से नारी कम'.....मिस पंत अपनी भावनाओं के तूफान में बही जा रही थीं। गर्व से प्रफुल्लित हो आईं, मुख–मंडल चमक उठा, वक्षस्थल उन्नत हो आया। शीशे के सामने उन्होंने अपनी केश–राशि पर कंघी फेरी, मुख पर स्नो और गर्दन के किनारे पाउडर की झाड़ लगाई। बिखर उठीं उनकी भावनायें, अपने अनुमप रूप को साक्षात् देख कर। झूम उठीं दर्पण के सामने अपनी मस्ती में।

'अरे ! यह मैं हूँ !' 'तब कौन ?' मानो रूप स्वयं उत्तर दे रहा था।

'हुजूर !'

'कौन ?'

'मै ! चलिये क्लब में बड़ी इन्तजारी हो रही है।

'अच्छा, तुम हो, आज कह दो ? मैं क्लब नहीं आ सकती। मुझे जाना है एक दूसरी जगह ।' मिस पंत सैन्डिल कुचलती हुई अपने ड्राइंग रूम चली गईं, आगन्तुक निराश होकर लौट गया।,

•

मादक सितार कब से बज रहा है, पियानो पर किसी की पतली गोरी ॲगुलियॉ दौड़ रही हैं। सामने सुरभित थी जल तरंग पर एक नशीली तान ! बॅगला इन्द्र की साक्षात् रंगशाला थी। बसंत मानो स्वयं आ गया है उस नटशाला में। मधु आलोक से रूठा शान्त किसी की प्रतीक्षा में है। उन्मुक्त ऑखें किसी को देख रही हैं। बाहर तिमिर है, भीतर अंगारिक आलोक यहॉ आज शहर के रईशों में जिलााधीश मित्तल साहब झूम उठे हैं। सारा वातावरण स्वर्गिक

नाद–स्वर से सुरभित है। अजब मस्ती है आज के जलसे में पर है किसी की प्रतीक्षा। 'छम् छम् छूम्, किसी की पद ध्वनि में, नूपुरों की तान है। सब खिल गये। कला अपना मोहक रूप लिये साक्षात्, कटि पर हाथ दिये खड़ी हो गई सभा में। कितनी ऑखों में मधु घोल उठा। छा गई मादकता क्षण भर में। ताल के साथ, स्वर, नाद के साथ अदा, अजब गुल खिल गया क्षण भर में। कला और रूप का कितना सुन्दर बाजार लगा था। पर बाजार में बहुत थोड़े लोग थे, जिनके पास अपार धन था, या पद। यही हैं ग्राहक और वहीं हैं विक्रेता। क्या कोई और भी इस स्वर्गिक लय–तान को सुन सकता है ? 'नहीं।' क्योंकि यह किसी का निजी मनोरंजन है। बॅगले के बाहर संगीने चमक रहीं हैं औरों के लिये।

'इन्हें भी एक प्याला'

'नहीं, पहले आप। नर्तकी ने अपने करों में प्याला लेते हुए कहा।

'घुट,। घुट !' आप जिलाधीश हैं।'

'और तुम मेरी रानी' कॉपते हुये मि0 मित्तल ने कहा। सब हॅस पड़े। बस, बारी–बारी सब के होंठों पर एक प्याला और कंपन। बड़बड़ा उठे दर्शक, जो थे चार पॉच। कला और तान, स्वर निज कुशलता पर था। झूमने वाले झूमते जा रहे थे।, यह कौन थी ?' 'मधुशाला नहीं नर्तकी।

'नहीं, 'समाज की पूज्या ! 'नहीं' फिर कौन ? 'सब की रानी' ! 'नहीं' फिर कौन ? वही रूप विक्रेता, आनन्दमयी मिस पंत, अविवाहित। यह है गुप्त जीवन एक क्षीण मुस्कान उनकी सम्पूर्ण दिनचर्या में से।

'मैं कितना कृतज्ञ हूॅ आप की इस कला पर।'

'कोई बात नहीं, यह तो मेडिकल कालेज की एक साधारण बात थी।'

'चाहे जो हो, अब आज.....।'

'मै। भी आप को बहुत प्यार करती हूॅ। मिस पंत ने मन्दस्मिति से कहा।

'पर मुझे.....मि0 मेहरोत्रा पर।' मि0 मित्तल ने गम्भीर होकर कहा।

मि0 मेहरोत्रा ! जाने दीजिए आप, और वे दोनों खिल पड़े स्पन्निल भविष्य के ऊपर।

मिस पंत की कार घोर तिमिल को पार करती हुई पहुॅच गई अपने बॅगले पर। लेटने के पहले उन्मुख ऑखों के सामने कितने चित्र आने लगे। कोई जिलाधीश है, कोई कप्तान है, कोई जज है मैंनेजर है, कोई रूप वाला है, कोई धनवाला है। इनमें कौन प्रेमी है, कौन प्रवंचक। इससे उनसे क्या सरोकार। हॉ चाहिये नित्य नयापन और परिवर्तन।' कितने अच्छे हैं जिलाधीश'–क्या करेंगे मि0 मेहरोत्रा उन्हें भी खुश कर लूॅगी.....से।––पर मुझे मि0 कर्नल पर क्यों दया आ रही है ? इसी से कि वे भी तो कितने अच्छे हैं।' हृदय ने उन्हें समझाया। नींद नहीं आ रही थी। घड़ी में बारह बज चुके थे। रेडियो का प्रोग्राम भी खत्म हो चुका था। उन्होने एक निःश्वास से करवट बदली। बाहर नीचे फर्स पर किसी की आहट हुई। इतनी रात को यहॉ कौन हो सकता है ? नौकर चाकर भी तो गहरी निद्रा में है। इनकी रात को 'कालिंग बेल' ! 'कौन ?

'कर्नल आर0 पी0 सिंह'

'ओह ! आप अभी आई।'

'कहिये, क्या है ?

'सुधा की पीड़ा कुछ शाम से बढ़ आई है, मुझसे रहा नहीं जाता।' मि0 कर्नल नितान्त दयनीय अवस्था से बोले। ऑखों में ऑसू थे। चेहरा उद्विन्न था।

'आप को एक नारी के लिए इतनी चिन्ता'

'नारी। नहीं, मेरी रानी सुधा'

'जाने दीजिये, आप इतना परेशान क्यों.....'

'यही कि बिना सुधा के हम मझधार में डूब जायॅगे'

'क्या वही कर्णधार हैं आपकी ?' मिस पंत ने आष्चर्य से पूछा।

'हॉ,।' उनका गला रूँध गया, ऑखों ने मोतियों का ढेर लुटा दिया। मिस पंत अपलक नयनों से उद्विन्न कर्नल को देख रही थीं। उन्हें रह–रह कर हॅसी आ रही थी उनकी सरलता पर।

'आप घबराइये नहीं मैं भरसक आपकी सहायता करूॅगी। फिर आप तो अभी कितने नौजवाने हैं.....।

'हॉ, मैं भीख मॉगता हूँ अपनी सुधा की आप से'

मिस पंत हॅस पड़ी उनकी सरलता पर, और देर तक देखती रही मि0 कर्नल को; जब तक वे घोर तिमिर में अदृश्य न हुये। सरलता और सहानुभूति का अनुपम समवय।

•

अभेद्य नारी–हृदय स्वयं एक गूढ़ कहानी हैं इन्दु उस मादक हृदय की एक भूल थी, परन्तु अभी–तक किसी को ज्ञान नहीं था कि 'इन्दु रानी' मिस पंत की रानी है। 'रानी' यौवन–पद पर अकस्मात् मिली हुई उनकी सन्तान है। पर मिस पंत अभी अविवाहित हैं। इसमें कोई विशेष रहस्य नहीं, पर हॉ, इतने दिन हो गए। कोई पता न लगा सका कि मिस पंत के कोई सन्तान है या उन्होंने अपने प्रणय को रूप के बाजार में ठोकरों पर कई बार क्रय–विक्रय कर दिया है। यही था गूढ़ रहस्य उस रमणी में। इसी पर उनके भविष्य का निर्माण हो चुका था। इसी पर उनकी समस्त आशायें केन्द्रीभूत थीं। पर हॉ 'रानी' उस रूप–नगरी में वे प्रयोजन मिल जाने वाली एक लड़की थी। उसका केवल जन्म मिस पंत से हुआ था पर उसका समस्त पालन–पोषण पूर्णिमा पंत के हाथ हुआ। पूर्णिमा पंत उनकी बड़ी बहन हैं इनका विवाह एक दूर शहर में एक कप्तान के साथ हुआ है। इनका दाम्पत्य जीवन बहुत सात्विक था। मिस पंत की एकमात्र इच्छा थी कि 'इन्दू' को किसी दिन समाज में लाकर सब को चकित कर दूँ। वे सब भॉति से इन्दू को अपने सॉचे से ढालना चाहती थी। इस रहस्य को उन्होंने कई बार अपनी बहन से प्रकट कर दिया था। इसके लिए वे खूब रूपया, कपड़े इत्यादि का प्रबन्ध करती थीं। यद्यपि इस रहस्य पर पूर्णिमा का घोर विरोध था, परन्तु दूसरे की सन्तान पर उनका क्या अधिकार ? फिर भी वे

अपनी 'स्नेहलता' से इन्दू को अधिक प्यार करती थीं। दोनों वहीं स्थानीय कालेज में शिक्षा पा रही थीं नवी कक्षा में। दोनों परम रूपवती थीं। बिना सोचे–समझे दोनों सगी बहन–सी प्रतीत होती थीं। पर हॉ, इन्दू बड़ी बहन और स्नेहलता छोटी थी। दोनों का एक स्थान का उठना बैठना, एक ही वातावरण का पालन–पोषण, एक ही षिक्षा थी। पर इन्दू के ऊपर न जाने किस की छाया, थी, वह कुछ और–सी प्रतीत होती थी। उसकी बातें, उसका, आदर्ष' कुछ विभिन्न–सा था स्नेहलता से। यही अन्तर और आदर्ष चाहती थीं मिस पंत ! इसके लिये उन्होंने शुरू से बहुत कुछ खर्च भी कर दिया था। हॉ। तो अभी यहॉ इन्दू का तार आया है कि 'क्या मैं इस छुट्टी में आपके यहॉ आ सकती हूँ मिस पंत के सामने चार वर्षों की घटनायें एक–एक कर चित्र–सी आने लगीं, जब से इस जगह उनकी बदली हुई, सचमुच उन्होंने अपनी 'इन्दू' को यहॉ नहीं बुलाया। क्या यही मातृ–हृदय है ? पर यदि कोई प्रष्न कर बैठे कि 'यह किसकी लड़की है, तो मेरे पास उत्तर क्या है ?' मिस पंत गंभीर थीं तार को अपने हाथ में लिये। 'कह दूँगी पूर्णिमा बहन की, हृदय में साहस हुआ। कलुषित आत्मा ने एक उपाय बताया। वे खुष हो गईं। सहसा सामने मि0 मेहरोत्रा की कार आकर रूकी। उन्होंने प्रेम से अभिवादन किया।

'यह क्या है ? किसका तार।

'वैसे ही है' मिस पंत ने बात टालते हुए कहा।

'देखें ?'

'क्या देखियेगा ? आप को हमेषा खेल सूझी रहती है' तार क्या देखियेगा।'

उन्होंने तार छिपाते हुये कहा।

'इन्दू कौन है भाई ?'

'बहन पूर्णिमा की लड़की'

छोटे से उत्तर में न जाने क्या छिपा था ?, मिस पंत का मुख सूख गया। हृदय में एक तूफान उठने लगा, मस्तक पर पसीने की बूँदें झलक आईं। पर मेहरोत्रा क्या जाने इस आन्तरिक आन्दोलन को ? वे भी तो थे एक रूप के ग्राहक। उनके आने का कारण तो कुछ दूसरा था। यहॉ तो मिस पंत वैसे ही न जाने क्यों गम्भीर हो गईं।

'हॉ, तो उस दिन साहब के बँगले पर आपने कमाल दिख दिया !'

'यह कौन कहता है ? मिस पंत की ऑखें गोल हो गईं और गम्भीर मुख से मेहरोत्रा को देखने लगीं।'

'अरे ! हम न जाने'.....।

'नहीं वे कोई खास बात नहीं थी। मिस पंत ने हॅसते हुये मि0 मेहरोत्रा के हाथ में हाथ डाल दिया। फिर हॅस पड़े दोनों– 'हमारे साहब कैसे हैं ?' 'वैसे ही हैं बेकार.....आप से थोड़े अच्छे हैं।'

'अच्छा हम साहब के साथ बाहर जा रहे हैं दो दिन के लिए। यह लो हमारा नमस्ते।'

'अरे ! चल दिये 'कहॉ जा रहे हैं ? दौड़े पर ?' मुँह बनाये हुये मिस पंत ने पूछा।

'कुछ राजनैतिक आन्दोलन को दमन करने। मेहरोत्रा ने गर्व से कहा–

'ये नीच खद्दर वाले कितना परेषान कर रहे हैं आप लोगों को ! मिस पंत ने कहा।

क्लब के लान में अफसरों की सुसज्जित गोष्ठी बैठी है। मीठी मीठी बातें हो रही हैं। मिस पंत अपनी अनुपम शोभा और वाक्पटुता से गोष्ठी को मस्त किये हैं। कितने अपलक देख रहे थे उनको और उनके रूप को। आज की गोष्ठी में जिलाधीष, मेहरोत्रा, नहीं हैं, फिर भी तो कितने हैं अपने कहलाने वाले.....। धीरे धीरे सर्दी बढ़ने लगी। नौ का समय हो गया। गोष्ठी ड्राइंग हाल में बैठी। सोडा, लेमनेट के बोतल खुलने लगे। तस्तरियॉ बिछ गईं मखमली पोष पर। नौकरों के पैरों में बिजली लग गई। लगे इधर–उधर दौड़ने और ग्लास, तस्तरियों पर तस्तरियॉ चलने लगीं। बड़ी देर तक शमा बॅधा था। खूब रंग था। मिस्टर 'कौल' और निगम' झूमने लगे। मिस्टर खान हॅसने लगे। मिस पन्त उनके पास थीं। नौकर यहॉ से वहॉ दौड़ रहे थे।

'बहादुर ! अवे ईडी पर कहॉ चला गया ? मिस्टर खान ने कहा।

'जी हुजूर !' प्याले को देता हुआ चुप था। उनकी आखें ढल चुकी थीं। मिस पन्त सबको लुढ़कते हुये देखकर कब से हॅस रही थीं।

'अरे ! आप डाक्टर हैं। आपको कैसे .....आयेगा.....कप्तान साहब ने कहा।'

'हॉ पर आपने तो खूब.....लिया है।'

'अबे। तुम लोग क्यों नहीं पीते ? काम के बाद शर्बत पीना चाहिए।'

'अच्छा हुजूर।'

'नहीं, अभी मेरे सामने। मैं कल देहात से.....दूॅगा'।

सब हॅस पड़े। सभी कुछ न कुछ बड़बड़ाने लगे। कोई मुकदमा देखने लगा, कोई लाठीचार्ज का हुक्म निकालने लगा, किसी ने फॉसी का हुक्म दिया, किसी ने काले पानी का। नौकर चुप थे बाहर चिकों के आड़ में। इतने में मिस पन्त थीं। सभी उचकने लगे। प्याले और तस्तरियॉ गिरने लगीं। सहसा मिस पन्त लुढ़क गईं कप्तान खान के बाहु–पाष में 'क्या ही.....रंग....आया मैं राजा रानी.....मेरी.....बा.....त––।

गैरेज में सनसनाती हुई कार आकर खड़ी हो गई। अर्दली दौड़ पड़े।

'लोग कहॉ हैं ? मि0 मेहरोत्रा ने पूछा।''

'हुजूर, अन्दर।''

यह था ड्राइंग रूम। यहॉ थी उनकी आषामयी मिस पन्त खान के बाहु–पाष में बॅधी हुई। ऑखें गोल होकर चढ़ गई। सिर घूमने लगा। निराषा की बलवती सरिता धीरे–धीरे घृणा के वेग में बहने लगी। हृदय में तूफान आ गया। छिः करते हुये आगे बढे, जब उन्होंने चुपके से देखा किसी के होंठ पर किसी के गुलाबी होंठ। लोग बुलाते ही रह गये, पर वे न मुड़े।

गोधूली की बेला थी। मृत्यु सी शीलता, और नीरवता का राज्य था। क्षितिज के अंचल से अंधकार फैलने लगा। दूर एक उज्जवल, देदीप्यमान तारक–पिंड झलकने लगा। मानों वह अभी महासिंधु से ऊपर फेंक दिया गया हो। उसमें अलौकिक आलोक था। मि0 कर्नल उदास हो उसे अपलक देख रहे थे। 'कितना सुन्दर है, पर भयानक !' उन्होंने एक निराषा की निःष्वास निकाली, फिर अपने सूने कमरे को देखा, जो सायॅ–सायॅ कर रहा था। बिना पत्नी के सुन्दर से सुन्दर अट्टालिका श्मषान है। केवल सुधा के न रहने से उनका घर ही उजड़ गया है। उन्हें रह–रहकर वे दृष्य याद आने लगे जब उन्होंने कितने शहरों में खड़े–खड़े कत्लेआम करवा दिया था। कितने घर, कितने खान्दान, कितनी निरीह मानवता का इन्होंने नाष किया है। आज इन्हें दुख हो रहा है, उनकी ऑखें ऑसुओं से प्रायष्चित कर रही हैं। उन पापों का।.....

कल 'सुधा' का आपरेषन होगा। उनका हृदय कॉप रहा है। यह कितनी आष्चर्य की बात थी, कि एक कठोर हृदय, इतना, निर्बल हो गया है। यही है अपनत्व की भावना और उसकी प्रतिक्रिया।

महेन्द्र सुधा के पास है। मि0 कर्नल ने उसकी पढ़ाई रोक दी है दो सप्ताह के लिए । एक मामूली आपरेषन और इतना तूल और भय ! सचमुच मनुष्य अपनी ही पीड़ा से रोता है, दूसरे की पीड़ा से शायद वह कुछ सहानुभूति ही प्रकट कर सके।

लाखों मनुष्यों को मृत्यु के घाट उतारने वाले कर्नल को सन्तोष नहीं, चैन नहीं। बेचैन से उन्होंने मिस पंत के बॅगले की राह ली। गिड़गिड़ाते हुये उन्होंने फिर से मिस पंत से अपनी वही दया की याचना की। कॉपते हुये हाथों से उन्होंने एक भरा लिफाफा दिया मिस पंत को। पलकें भार से दबकर नीचे झुक गई थीं। दया करना मेरी सुधा पर मिस पंत ! कहीं मेरी जीवन–निधि न लुटने पावे।'

'आप इतने व्यग्र हो रहे हैं ? मैं जीवन–पर्यन्त आपके साथ रह सकती हूॅ। आप घबड़ाते क्यों हैं ?' मिस पंत ने गंभीरता से कहा।

'नहीं, नहीं। यही है मेरे जीवन का अमृत–पाथेय, मेरी सुधा रानी ! मैं बचे हुये जीवन में अपनी सुधा को ले अपने समस्त पापों के लिये प्रायष्चित करूॅगा। मेरी हिंसा से सुधा को पीड़ा हो रही है, यह मुझे मालूम है। पर काष ! मेरी सुधा मुझे मिल जाती। 'उन्होंने एक निःष्वास निकाला। पाप और प्रायष्चित यह क्या ?'

'यही अपनी कमाई, भले–बुरे काम।' कर्नल ने कहा।

मिस पंत मि0 कर्नल की उभरी हुई व्याकुलता, मानसिक पीड़ा देख रही थीं। ऑखों में किसी का प्रेम ऑसू बनकर भरा था। पलकें खड़ी थीं। मुख–मण्डल उदास होते हुये भी चमक रहा था अपने गौर–वर्ण से। ललाट पर पसीने की चार लकीरें टेढ़ी–मेढ़ी पड़ीं थीं। उन्हें किसी वस्तु की सुध न थी, सुध थी केवल अपनी सुधा की। मिस पंत ने सच्ची ममता की इतनी पराकाष्ठा न देखी थी, यद्यपि उनके ऊपर कितने मरने वाले थे। पर वास्तव में उनके ऊपर कोई दो बूंद ऑसू बहाने वाला न था। मिस पंत सोच भी रही थीं, क्षण भर के लिये। सचमुच रहस्य क्या है; मैं भी तरूणी हूॅ, इतने बड़े पद वाली हूॅ, मि0 कर्नल भी नौ–जवान हैं, पर मुझसे वे भीख मॉग रहे हैं अपनी 'सुधा' की ! कितने अच्छे हैं मि0 कर्नल ! 'काश' ! मैं सुधा के स्थान पर होती !'

'अच्छा, आप इस लिफाफे को स्वीकार करें।'

'यह क्या ?'

'कल के लिये फीस, मेरी सुधा का जीवन–दान।' मिस्टर कर्नल चले गये सुधा के पास;.....प्रेम की कितनी क्षमता है इनमें ! क्या सुधा मुझसे बढ़कर भाग्य वाली है ? कभी नहीं ? उसे कल कितनी तकलीफ होगी ! छिः कितना दुख है, उस जीवन में। हॉ, मि0 कर्नल को पाने में उसका भाग्य है। पर इससे क्या मेरी दुनिया कुछ और है, सब की कुछ और ! 'मेरी इन्दू' कितनी सुन्दर है ! इतनी ही उम्र में नवीं कक्षा में पढ़ रही है ! कितने अच्छे दिन बीतेंगे उसके साथ मेरे। एक क्षण में ले लूँगी सैकड़ों रूपये। इस सड़े हुये जीवन में रक्खा ही क्या है ! एक पति के नीचे कितनी गुलामी; कितनी यातनायें ! 'यदि' सुधा मर गयी तब ? क्या कर्नल मेरी तरफ आ सकते हैं ? क्यों नहीं कौन नहीं चाहेगा। मेरे रूप और सम्मान की दुनिया को। यदि मैं इस तरफ इशारा ही कर दूँ, तो मिस्टर कर्नल सब भूल जायेंगे। मुझे अपने ऊपर विश्वास है। सचमुच कर्नल बहुत सुन्दर हैं। पर पति का नाम कितना बुरा है।

मिस पंत विचारों में डूबी हुई हैं। उनकी ऑखें खुली हुई खिड़कियों से बहुत दूर देख रही हैं। उन्हें समय का ज्ञान नहीं। पॉच बज गये हैं। उनके टहलने का समय हो गया है। सहसा किसी की कार सनसनाती हुई लान के किनारे रूकी। उनकी तन्त्रा भंग हुई। सामने देखा, मिस्टर खान आ रहे हैं। वे कितनी खुश हैं इन्हें पाकर।

'इस सूने बॅगले पर आप को क्या मिलता है ?'

'कुछ नहीं, कपड़े बदलकर अभी आने वाली थी।.....आइये बैठिये। मैं तब तक कपड़े पहन लूँ।' मि0 खान के पतले होंठ दोनों ओर फैल गये। उन्हें अजीब गुद–गुदी मालूम हुई।

'आज पिक्चर देखने की इच्छा हो रही है।'

'क्या हो रहा है ?'

'अपना पराया।' मि0 खान ने कहा।

'अच्छा, चलिये।' कार पर दोनों बैठ गए।

'और कहिये क्या हाल चाल है ?' मि0 खान ने पूछा।

'कोई बात नहीं है। हॉ, सुना है, शायद मि0 मेहरोत्रा और मित्तल साहब कुछ रूठ–से गये हैं।' मिस पंत ने उपेक्षा से कहा।

'साहब ?.....अच्छा, जाने दो। हम लोग तो हैं ही।'

'हॉ, और क्या ? मेरी तबियत तो अब अन्य किसी के यहॉ जाने को नहीं कहती। पर मजबूर हूँ अपनी आदत से। 'आह। मेडिकल कालेज की वे सुन्दर रातें और घड़ियॉ याद आती है।'....कार सनसनाती हुई पहुँच गई पैलेस पर। संगीत का प्रवाह चल रहा था। लोग दौड़ रहे थे इधर–उधर। स्पेशल ब्लाक का पर्दा उठा, दोनों घुस गये। मिस पंत ने उपेक्षा की, घूंघट वाली कितनी स्त्रियों को देखकर ।

चित्र चलने लगा । मि0 खान कितने खुष थे अपने समीप अकेले आज मिस पंत को पाकर । 'हम लोग अब साथ रहा करेंगे ।'

'हॉ, यही मैं भी चाहती हूँ ।' मिस पंत ने मि0 खान के हाथ को दबा लिया अपनी हथेली से । चित्र चल रहा था, इधर दिलों में तूफान भी । हाल में अंधेरा है, किनारे स्पेषल में और भी । सहसा किनारे से पर्दा हटा । 'यह कौन ?'

'मैं ।'

'अहा ! मि0 कौल ? आइये ।' मिस पंत ने चुपके से अभिवादन किया । मि0 खान के ऊपर सॉप लोट गया । वे चुप थे । मानों चित्रपट में तल्लीन हों ।

इन्टरबेल हुआ । हाल में विद्युत–प्रकाष हुआ । मिस पंत चमक उठीं ।

मि0 कौल ने देखा, कप्तान साहब उदास थे ।

'पिक्चर कैसी है ?'

'कोई खास बात नहीं ।' कप्तान साहब ने छोटा सा उत्तर दिया ।

'पर मुझे तो अच्छी लग रही है ।' मिस पंत ने कहा ।

'मुझे भी ।' – कौल साहब ने समर्थन किया ।

चित्र आरम्भ हो गया, पर मि0 खान गम्भीर थे । मिस पंत ने बहुत प्रयत्न किया, पर उनकी गंभीरता न गई । मि0 कौल बार–बार दबा लेते थे मिस पंत की पतली हथेलियों को । एक हृदय में जलन थी, दूसरे में चिन्ता, तीसरे में क्षोभ ।

'आज देरी कैसे ?' मिस पंत ने कौल से धीरे से पूछा ।

'वैसे आज आने वाला न था । क्लब में आप की इन्तजारी थी, पर निःसहाय यहॉ, ···· मिस पंत ने उन्हें देखकर थोड़ा सा मुस्करा दिया । मि0 खान का दिल इधर था, केवल आंख थी चलती हुई तस्वीर की ओर । दिल में एक द्वेष हुआ । उन्होंने कहा –'तस्वीर देखिये, बेकार की बात ···· ।

खेल खतम हुआ । पर दिल का तूफान बढ़ गया ।

यह है मानव स्वभाव और हृदय का नाटक । षरीर में स्पंदन होता है । मानव अंगड़ाई लेता है, हृदय से निःष्वास निकालता है, कि 'मैं तुझसे प्रेम करता हूँ, तू मेरी रानी है ।' यह भावना है या साधना ? नारी स्वयं चाहती है अपना अहेर । उसकी आंखें कहीं उठती हैं, तो वहां प्रेम विचलित हो जाता है । हृदय कहता है, वह मेरी रानी नहीं ; बैरी है । पर वास्तव में क्या ? वासना की एक मुस्कान, और उसी का उपकरण । वह क्या करे कि सब खुष रहें और वह सब की रानी बनी रहे ? पर बात कुछ दूसरी है ।

समय हो गया । आपरेषन रूम ठीक है । औजार सब धुल–पुँछ चुके हैं । नसें बड़ी तत्परता से इधर–उधर लगी हैं । फोन की घंटी हुई । मिस पंत सावधानी से दवा ठीक कर रही थी । उनका ध्यान बट गया । उन्होंने फोन का चोंगा लिया । यह हैं बुलाने वाले, मि0 षाह, इन्सपेक्टर जनरल । किस पुकार में दर्द है ? आकर्षण है ? एक याचक के, एक मृतक के या एक .... के ? यह थी प्रेम–पुकार, कर्त्तव्य पथ से डिगाने वाली । एक और प्रणय–सिन्धु हिलोंरे ले रहा था, एक ओर अभी कर्नल पर केवल मन हो गया था । कितनी आषा है मि0 कर्नल की इन पर ! इन पर कितनी जिम्मेदारी है ! आपरेषन का समय आ गया था । आज इसे हो जाना 'सुधा' के लिये हितकर था, पर .... । आपरेषन आज नहीं होगा। क्या इसके लिये कर्नल प्रष्न करेंगे ? कभी नहीं । हॉ ; षायद वे रो दें, सुधा की तकलीफ पर । पर नारी के पास बहुत से रास्ते हैं । मि0 कर्नल के सामने रखने के लिये । 'आज के लिये आपरेषन 'सिविल सर्जन' ने रोक दिया है । यह अच्छा सा भुलावा आ जायेगा, तब तक चलें उनके बॅगले पर । यह तो चौबीस घंटे का काम है । फिर हो जायगा .... ।'

'कोई काम पर थीं ?'

'नहीं, नहीं ।' कार से उतरते हुये मिस पंत ने उत्तर दिया।

'क्षमा करना, मुझे मालूम हो रहा है कि षायद आप कुछ चीरने–फारने जा रही थीं । पर हां, एक बात पूछनी है .... ?'

'हां, हां, ष्षौक से ।'ष्षोफे पर बैठती हुई मिस पंत ने कहा ।

'कल पहाड़ के जंगलों की ओर पिकनिक में चलना है । मैंने अभी–अभी पुलिस तैनात कर दी है वहां के लिये । बड़ा अच्छा रहेगा कल ।'

मिस पंत की आंखें फैल गईं । हृदय खिल गया । पतले–पतले होंठों के किनारे फैल गये ।

'बस, इतनी बात के लिये फोन ? आप कल ही साथ ले लेते ? मैं कहीं दूर हूं .... ?'

'तो तैयार हो न ?' उन्होंने अपनी उत्सुकता प्रकट की ।

'हॉ, चलूॅगी क्यों नहीं, ? कौन जाने आप भी न रूठ जॉय ? किसे–किसे मनाऊॅगी ?'

'लगीं बनाने ।'

'नहीं, ठीक कह रही हूॅ । किसे गिनाऊॅ .... ?'

' पर मैं नहीं ।' वे बीच ही में बोल उठे ।

लेडी डाक्टर की प्रतीक्षा है । मि0 कर्नल का स्वॉस घुटा जा रहा है । नर्सें उन्हें आष्वासन दे रही हैं । वे बार–बार अपनी सुधा के पीले मुख को देखते, सुधा भी गिरी हुई भारी पलकों को कभी उठाकर उन्हें देख लेते । निःसहाय पीड़ा और प्रेम की दो बूॅदें बरस पड़तीं उन सम्पुटों से । इन आंखों में आज आसूं हैं । इन पलक, सम्पुटों में एक याचना छिपी है । एक सन्देष दिया है, वही प्यार बनकर ढुलक पड़ता है । मि0 कर्नल ने उन मोतियों को संचित कर लिया अपनी रूमाल में । आज सुधा कुछ कहना चाहती है । उसके पीले होंठ खुलकर भी रह जाते हैं । मि0 कर्नल ने

आष्वासन दिया 'सुधे ! तुम्हारा कल आपरेषन जरूर हो जायगा । तुम जल्द अच्छी हो जाओगी ! फिर हम और .... तुम .. ..।

सुधा की भीगी हुई पलकें उनके मुख पर स्थिर हो गईं । हृदय फूलने लगा, गर्म सॉसें चलने लगीं । ऑखें छलछला पड़ीं, कर्नल व्याकुल हो गये ।

'सुधे ! कुछ बोलो, कुछ मॉगों, कुछ सेवा ।'

'आज आपरेनष नहीं, कल ।' आन्तरिक पीड़ा से लिपटा हुआ एक क्षौण वाक्य निकला ।

'अच्छा, मैं लेडी डाक्टर से कहता हूं कि अब आपरेषन कल ही होगा ।'

'नहीं, साहब आ गई हैं । यद्यपि वे कल ही करने वाली थीं, पर उन्हें जल्दी है, कल बाहर जाना है।' एक नर्स ने कहा ।

'नहीं, मैं साहब से आज के लिये छुट्टी ले लूॅगा ।' मि0 कर्नल विष्वास–पथ पर जल्दी–जल्दी बढ़े । लेडी डाक्टर सामने आ रही थीं ।

'क्या है ?' मिस पंत ने पूछा

'आज आपरेषन न हो ।'

'आप भी बच्चे हो रहे हैं ! समय आज का है, फिर आपरेषन कैसे कल होगा ?' मिस पन्त ने रोब से कहा ।

'आपने तो अभी फोन के बाद कहा है कल के लिये ।'

'हां, वह तो ठीक है ।'

'पर हमें सिविल 'सर्जन' के साथ कल बाहर जाना है । यह थी लेडी साहब की वकालत और प्रवंचना। हृदय किस–किस घाट लगे । मि0 कर्नल का सर घूम गया । ऑखों के सामने निराषा की लकीरें खिंचने लगीं । हृदय मसोसकर रह गया । पर थे वे लाचार ! कर्त्तव्य और श्रद्धा का संग्राम था, दूसरी ओर प्रेमी की बातों का भी । पर विजयी कौन है ? – पर यह थी कर्नल साहब के सामने कितने दुख की बात ! 'सुधा की एक कामना को भी वे पूरी न कर सके । न जाने उसका हृदय क्यों कल के लिये कह रहा है ? किंकर्त्तव्य–विमूढ़ हो लौटे सुधा के पास । उनका एकलौता महेन्द्र मॉ को देखकर रो रहा था, उसे कौन ढांढ़स दे ? मातृ हृदय में एक कंपन हुआ, हृदय–लहरी में बल आया । वात्सल्य भावना ने जोर पकड़ा । हृदय ने चाहा कि पुत्र के मुख को चूम ले । पर पीड़ा उबल पड़ी और पीले मुख से निकल पड़ा 'आह । आह ।

'सुधे ! मैं तुम्हारी अन्तिम इच्छा भी पूरी न कर सका । मेरे ऐसे पति को क्षमा करना, आज ही तुम्हारा आपरेषन होगा ।'

पीले मुख से एक क्षीण षब्द निकला 'अच्छा ।'

'महेन्द्र का जी धक् से हो गया । षरीर की नसें फूल आईं । उसका चेहरा रक्त–वर्ण हो गया । कर्नल की उन्मुक्त आंखें, बरसती हुई सुधा के ललाट पर रूक गईं । धमनियों में ष्षीतलता आ गई, पर ह्रदय की गति तीव्र हो गई। पर आषा थी, उस तूफान में भी सुधा के जीवन की आपरेषन आरम्भ ही होने वाला है । मिस पंत ने नम्रता से कहा मि0 कर्नल को बाहर जाने के लिये । कर्नल साहब का सर घूम गया । पॉव मन–मन भर के हो गये । आंखों के सामने अंधेरा छा गया । उन्होंने चलते समय याचना की 'देखना' मेरी जीवन–निधि सुधा तुम्हारे–आंचल में है । यही भिक्षा है आपसे । मैं भर दूँगा आप की रिक्त हथेरियों को ।'

'अच्छा ।' मिस पंत ने हंसते हुए कहा ।

'मैं फिर कहता हूँ, सुधा की भीख देनी होगी'

•

प्रकृति का अंचल खुला है । नव प्रकृति–वधू अपने ही हरि–तांचल में दक्षिण पवन का यह इठलाना, समय का मधुमय राग' दर्षकों की आंखों में रंग घोल देता है । षरीर में स्पन्दन हो आता है, प्रकृति के बीच आते ही । कितना नषा हो रहा है पहाड़ी के ऊपर । छोटी उपत्यकायेंक कल–कल करते हुये नालों से गलबाहीं लिये हुये कितनी अनुपम मालूम हो रही हैं ! मिस पंत के पैर आगे बढ़ रहे हैं अपनी पिकनिक पर । ऑखें प्रकृति की अनुपम षोभा देखकर गुलाबी रंग में घुल जाती है । दक्षिण पवन में उनके अस्त–व्यस्त अलग–जाल उड़ रहे हैं । उनकी पोषाक षिकारी की–सी है । हाथों में बन्दूक और कमर पर लटकता हुआ कैमरा बक्स । पहाड़ी के निचले ही भाग में इन लोगों की कार रोक दी गई है । इनके साथ आज खुष हैं मि0 षाह, मि0 कौल, मि0 खान । सब के हाथों में बन्दूकें हैं । पीछे–पीछे सात कमर बॉधे पुलिस और चपरासी हैं । पहाड़ी की चढ़ाई मामूली थी । न कोई खतरा था, न थकान, था एक मनोरंजन । प्रकृति यहां कितनी सुहावनी था संसार के कोलाहल से दूर । झाड़ियों के बाद सुन्दर–सुन्दर झुरमुट, वृक्षावलियॉ, गलबॉही देती हुई लतायें, बन–कुसुम का सौरभ, मधुकरों की टोली, घने जंगल में छनती हुई सूर्य की किरणें कितनी सुन्दर थीं । टोली आगे बढ़ी । कुछ निरीह पक्षियों का षिकार हुआ, बन–पषु कोई हाथ न आया । सामने के झुरमुट के आगे मिस पंत ने अपनी टोली का फोटो लिया, और फिर दो चार सीनरीज । थोड़ी देर के बाद लौटने का विचार हुआ । परन्तु अभी मि0 षाह को पिकनिक का रंग न आया । उन्होंने चुरूट दबाते हुए मिस पंत के कन्धों पर हाथ रखकर धीरे से कहा – 'मेरा एक फोटो आप के साथ ।'

इस प्रस्ताव का मि0 खान और मि0 कौल ने समर्थन किया । फिर क्या था ! सब की अलग–अलग ग्रुपिंग हुई' मिस पंत के साथ ।

दोपहर के बाद पार्टी कुछ थक गई । आराम करने का कुछ विचार हुआ । चपरासी ने एक लम्बी कार्पिट बिछा दी । कुछ फल–पकवान खाया गया । सब आष्चर्य में थे कि इस निर्जन बन में कहां से इतना आनन्द आ रहा है ? बिना बिछावन के ही नींद ऑखें मूँदे ले रही है । मिस पंत का पैदल चलने का यह पहला ही अवसर था, उन्हें नींद आ गई इठलाती हुई सुगन्धित दक्षिण पवन में । वे अस्त–व्यस्त खर्राटें लेने लगीं । उनकी गुलाबी ऑखें ढक गईं

पलकों से । मि0 षाह ने मजाक के लिये दो–एक बार जगाने का प्रयत्न भी किया, पर वे न जागीं । उनका सुन्दर केमरा–बाक्स किनारे था, मि0 षाह ने वैसे ही समय बांटने के लिये कैमरा–बाक्स को खोला । उसमें अलग–अलग फिल्म फोटो इत्यादि रखने के सुन्दर सुन्दर खाने बने थे । बेकारी में उन्होंने सब फोटुआ को निकाल लिया । पतले से कागज में धुली हुई आठ दस फोटो थीं । उनकी उत्सुकता बढ़ी । उन्होंने सब के बीच चित्रों को बिखेर दिया। सबों ने उनकी चित्रकला की कुषलता की सराहना की । करीब–करीब जिले के सभी मषहूर अफसरों के साथ उनका हंसता हुआ चित्र था । सब के हृदय में जलन हुई, पर चित्र देखने की उत्सुकता बढ़ती गई ।

इन चित्रों के बीच एक रंगा हुआ चित्र था । इसे देखते ही सब की उत्सुकता कुतूहल में परिणित हो गई । सब तर्क करने लगे इस चित्र को देखकर । यह मिस पंत का चित्र था जब वे मेडिकल कालेज से निकल रही थीं । कितना गठा हुआ षरीर था । सब लोग आष्चर्य में पड़ गये । उनकी अंगुली पकड़े हुए यह किस मनोहर बालिका का चित्र था ? अभी यौवन अंगड़ाई ले रहा था, जीवन पथ पर । चित्र के नीचे सुन्दर अक्षरों में लिखा था 'इन्दू रानी पंत' । यह बालिका कौन हो सकती है ? अभी तो मिस पंत अविवाहित है ! हॉ, यह इनकी बड़ी बहन पूर्णिमा पंत की लड़की होगी । बचपन का चित्र है । पर मिस पंत के मुख से वात्सल्यआभा छिटक रही थी उस चित्र में, यद्यपि वह चित्र उनकी जवानी के प्रथम–चरण का था । क्या मिस पंत के कोई बालिका हो सकती है ? 'नहीं ये तो इस दषा के विपरीत है, फिर आज तक किसी को पता न होता ? षायद .... । सभी अपने अपने तर्क को रखते, फिर स्वयं काट भी देते । कुछ दिलों पर उदासी छा गई । पर नारी–हृदय कितना गूढ़ है, उसे कौन जाने ? वह अभेद्य है । मिस पंत वहीं लेटी थीं, इधर उनके छिपे जीवन का तर्क हो रहा है । .... सहसा उन्होंने अंगड़ाई ली, लोगों ने झट चोरों की भॉति कैमरा बक्स वहीं रख दिया । परन्तु उन्होंने देख लिया अपने कैमरे को रखते हुये । उनका जी धक् हो गया । सब लौटने लगे नीचे तलहटी में लोग अपनी–अपनी कार पर बैठे । हॅसी तया मनोरंजन होता है, पर मिस पंत उदास थीं । हंसती हुई वे सन्न थीं । रास्ते में उन्होंने ष्षंका–समाधान किया । उनके सभी चित्र उल्टे पल्टे थे । सॉपलौट गया उनकी छाती पर । षरीर पसीरे से भीग गया ।

'क्या आप परेषान–सी हैं ?' मि0 षाह ने पूछा ।

'वैसे ही, कोई बात नहीं ।' मिस पंत ने हृदय गति को छिपाते हुए कहा । रास्ते में लोग कितने मजाक की बातें करते रहे, पर उनके हृदय से हॅसी न फूटी । केवल कृत्रिम उल्लास था उनके मुख–मंडल पर। लोग सोचते ही रहे कि आखिर उनको एकाएक उदासी का कारण क्या था, पर कोई समझ न सका । समझ भी कैसे सकते ।'

'रात के आठ बजे हैं । मिस पंत सुधा को देखकर अपने बॅगले पर बैठी हैं । आपरेषन हुये चौबीस घंटे हो गये, पर अभी तक सुधा को होष न आया । पेट से बच्चा मरा हुआ निकला है, किसी को बच्चे की चिन्ता नहीं । हॉ, सुधा बच जाय ।' मिस पंत आज बहुत उदास थीं । मुख कुछ उतरा–सा था । भूली–भूली सी उनकी ऑखें न जाने कहां क्या देख रही थीं ? हृदय में वेदना थी और मस्तिष्क में चल रहा था भीषण संग्राम । सहसा कर्नल साहब का प्रवेष हुआ। कोच पर बैठते हुये कर्नल ने मिस पंत को उदास देखा । उन्होंने पिकनिक के बारे में प्रष्न किया । मिस पंत का जी धक्

हो गया । उन्होंने कृत्रिमता से हॅसकर बात काट दी और कर्नल को संतोष देने लगीं 'सुधा अब ठीक हो जायगी । पेट से बच्चा मरा निकाला गया है इस कारण पीड़ा असह्य है, और वह बेहोष है ।'

'तब ?' कर्नल ने पूछा ।'

'हॉ, मैंने होष आने के लिये इन्जेक्षन और दवा दे दी है । कर्त्तव्य करना मेरा काम है, फल देना ईष्वर का .... ।'

मि0 कर्नल इस आष्वासन पर सन्तुष्ट हो चले गये सुधा के पास ।

मानसिक संग्राम एकाकी में बढ़ गया । सुसज्जित करमे के चित्रों पर उनकी सृष्टि घूमने लगी । कहीं सन्तोष नहीं । हर चित्र पर उनकी अलग दुनिया थी, अलग सोने का संसार था । जो क्षण भर के लिये सहसा पलकों में छा जाता था । पर आज उन पलकों में सहसा ऑसू छलक पड़ते थे । पलकों में अब साहस नहीं रहा कि वे ऊपर देखें । वे लेट गईं, वहीं अपने कोच पर ।

'कल की पिकनिक की घटना चित्रित हो गई आंखों के सामने । 'मेरा प्रेम, ओह ! प्रवज्ञना बन गया। मेरी कल की कृत्रिमता सब के सामने प्रकट हो गई । 'क्या वे लोग समझ गये होंगे कि 'इन्दू' मेरी ही लड़की है ?'

मैं कल पिकनिक पर क्यों गई ? मैं सुधा को छोड़कर क्यों चली गई पिकनिक पर ? कितना बड़ा पाप किया मैंने मि0 कर्नल के साथ ! कितनी आषा रखते थे वे मेरे ऊपर ! मैं पापिनी हूॅ । क्या यह बात प्रकट हो गई ? यदि मैं कल यहीं होती, तो सुधा बेहोष न होने पाती, उसे कायदे से देख न गया । फिर मेरी चोरी .... प्रकट हो गई । मेरे जीवन में कितने स्वप्न हुये, कितनी रातें आईं, कितने प्रातः हुये । मेरी 'इन्दु ....' ओफ .... इसे मैंने कितने दिनों से छिपा रक्खा था अपने वाह्य आडम्बरों से फ! सचमुच क्या विवाह–प्रथा बुरी चीज है .... नहीं .... हॉ । मैं क्या उत्तर दूॅ, अपने को ? मि0 मेहरोत्रा अभी अविवाहित है । उनकी इच्छा थी मेरे साथ .... मैंने ही उन्हें प्याला दिया, मैंने जगह जगह अपनी कला दिखाई कितनों को खुष रखने के लिये ! कितने रूठते गये । अब किन्हें मनाऊॅ ? .... ओह ! मैं पिकनिक पर क्यों गई फिर भी घायल सुधा को छोड़कर यदि मैं पिकनिक पर थी, तो पूरा केमरा–बाक्स ले जाने की क्या जरूरत थी ? फिर क्यों इसमें 'इन्दु' की तस्वीर रक्खी ? पर इससे क्या ? लोग कौन जाने पता न पा सके हों । अब मेरा कौन रहा ? ओह । मेरी इन्दु ! मैं तुझे छिपाती रही अपने को वासना की साधना बनाती हुई । आज तुम 16 वर्ष की हो गई, पर तुम्हें लेकर अपने पास न सो पाई ।''

'इन्दु' की सामने टंगी हुई तस्वीर हॅस रही थी और कुछ कह रही थी अपनी मॉ से । मिस पन्त ने करवट ली । हृदय–पट ने पल्टा खाया । कुछ विचार बदले । षीषे में अपना मुख देखा और सुन्दर बॅगले के सामने गैरेज में आस्टिन कार । उन्हें ख्याल हुआ कि वे जिले की लेडी डाक्टर हैं, अभी उनके पास रूप है, पद है, क्या है नहीं ? जाने दो सभी को । मि0 कर्नल कितने सुन्दर जवान हैं, प्रेम की षक्ति इनमें कितनी अधिक है ! फिर तो इतनी बड़ी पेंषन .... ।

तो क्या मि0 कर्नल मेरी .... मान लेंगे ? उनकी तो आत्मा सुधा की आत्मा है, उसकी हॅसी इनकी हॅसी है, उसका मरण इनका मरण है । कितना आदर्ष प्रेम है, अपनी पत्नी के प्रति ! सचमुच कितने अच्छे हैं कर्नल साहब तो क्या मैं अन्तिम पाप करूॅ ? पर पाप कैसा ? सुधा का जीवन असम्भव है । उसकी अॅताड़ियों में घाव हो गये हैं । वह अभी तक बेहोष हैं और फिर .... । फिर कर्नल को मैं क्या उत्तर दूॅगी ? दिखा दूॅगी अपने खजाने और रूप को, वे अवष्य भूल जायेंगे सुधा को । पर कौन जाने, उनकी ऑखों में मेरी सूरत न लगे सुधा के सामने ? मिस पन्त यही सोचते–सोचते स्वप्निल जाल में झूल गईं, ऑखें बन्द हो गईं । मि0 कर्नल का गौर–वर्ण उनके रोम–रोम में रम गया । हृदय पुकार रहा था 'हत्या ! हत्या ! कर्नल के साथ .... । कौन जाने उनका अन्तिम पाप और कर्नल के प्रति उनके जीवन का चौराहा बन जाय ।

कलुषित हृदय कितना षंकित होता है । पद–ध्वनि हुई नहीं कि षरीर के सारे रोम खड़े हो जाते हैं। यह हृदय कितनी ठोकरें खाता है, इसमें कितने प्रष्न उठते हैं ? कितनी षैतानी आती है दिल में ! घात पर प्रतिघात, पाप पर पाप, नारी–हृदय कितना विचित्र है । नारी माता बन चुकी है, पर उसे बालिका के लिये लोरियॅा नहीं याद हैं । षिक्षा है, पर आदर्ष ? इन्दू उनकी एक मात्र सन्तान है । पर वह पूर्णिमा पन्त के पास 'स्नेहलता' के साथ नवीं कक्षा में पढ़ रही है । उसके जीवन का आदर्ष क्या होगा ? इसे मॉ ने पहले ही बता दिया है । वह आगामी जीवन के लिये उसी प्रकार तैयारियॅा कर रही है । उसकी मॉ, या कुछ अन्य, उसे सिखा रही हैं कुछ बनने के लिये, अपने जीवन का प्रतिनिधि । इन्दू बालिका थी, उस पर रंग चढ़ गया है अपनी मॉ का । अब तो वह नवीं कक्षा में पढ़ रही है । उसे प्र्याप्त रूपया मिलता है अपनी मॉ से । 'पूर्णिमा को बुरा लगा करे, स्नेहलता अपने आदर्ष पर चले, पर इन्दू अपनी मॉ के इंगित–पथ पर चलेगी । उसकी मॉ कितनी सुखी है ! वह अपने मन की रानी है, कितने लोग उनके पीछे मरते हैं ! कितना सुख है कैसा स्वर्णिम संसार है ! यह है इन्दू का स्वप्न और उस क्षेत्र के लिये उसकी तैयारियॅा हो रही हैं ।

●

गोधूली कितनी भयानक होती है । फिर उस दिन की, जब प्राइवेट वीमेन वार्ड में 'सुधा' अन्तिम सांसे ले रही थी । उस सायॅ–सायॅ में कितनी भयानकता थी ! मानो किसी की हत्या हो रही हो । सुधा अपने पलॅग पर अचेत पड़ी है । सॉसे लम्बी–लम्बी, रूक–रूक कर चल रही हैं, उसकी साड़ी रक्त से सरोबार हो रही है । मि0 कर्नल अचेत–से हो रहे हैं । महेन्द्र को बिजली लग गई है । मिस पंत, सिविल सर्जन तथा अन्य प्रसिद्ध डाक्टर सुधा को देख रहे हैं । मि0 कर्नल चीख मार रहे हैं । उनकी ऑखें सूख गई हैं, पलकें खड़ी हैं, ऑखों से ऑसू नहीं, अंगार निकल रहे हैं । हृदय रो रहा है, मस्तिष्क कह रहा है हत्या हुई ! हत्या हुई !

'मेरी सुधा को बचाओ ।' मि0 कर्नल ने रोते हुये कहा ।

'क्या बतायें' हाथ मलते हुये सिविल सर्जन ने कहा ।

'कहिये ···· ?'

'सुधा अब आपकी नहीं है कर्नल साहब ! आप महेन्द्र को देखिये ।'

'क्यों ?' मि0 कर्नल ने सावधानी से पूछा ।

'किसकी गल्ती बतायें, ···· अब सुधा ···· ।'

मिस पंत के कान खड़े हो गये । मि0 कर्नल की दुखिया ऑखें पूछ रही थीं कि मेरी याचना कहां है? मिस पंत अवाक् थीं – महेन्द्र का दिल अपनी मॉ को ढूंढ़ रहा था । वह भी प्रष्न कर रहा था कि उसकी मॉ कहां अच्छी है ? क्या इसके लिये मिस पंत के पास कोई उत्तर है ? कुछ नहीं ; कितना जघन्य अपराध है – सुधा किसी के हाथ से मिलकर भी निकली जा रही है । मि0 कर्नल के पास कोई चारा नहीं कि भागती हुई सुधा को रोक लें, कुछ बातें कर लें । चीख उठे, अपने को रोक न सके । वे बढ़े सुधा के कंकाल की ओर और फूट पड़े उसकी चलती हुई अत्मा से 'मुझे क्षमा करना सुधे ! मेरे पापों से तुम्हारी हत्या हुई । मैं तुम्हारी अन्तिम इच्छा भी पूरी न कर सका । तुम मुझे कल के आपरेषन से रोक रही थीं, पर मैंने अपने हाथों तुम्हारी हत्या की। कितना पापी हूॅ मैं ! तुम्हारा महेन्द्र यहीं रो रहा है, उसे ही देख लो एक बार ; तुम कहॉ जा रही हो सुधा ? मैं तुमसे वहीं मिलूॅगा । मेरे पापों से तुम्हारी यह बुरी मृत्यु हुई । मैंने कितनी हिंसा की है लड़ाई में ! आखिर यह भी तो मेरे पाप हैं !' मिस पंत भी रो पड़ीं । उनका भी छोर भीग गया ; यह क्यों ? षायद पाप की प्रतिक्रिया हो कर्नल के ऑसुओं से । सुधा का वक्षस्थल भीग उठा, अन्तिम बार सुधा के कंकाल में गिड़गिड़ाहट हुई, ऑखों से दो बूॅदें टपक पड़ीं न जाने कहॉ से ? दोनों बूदें बह चलीं सूखे गाल से नीचे वक्षस्थल की ओर और मिल गई पति के ऑसुओं में । सुधा सदा के लिये षान्त हो गई । कर्नल वहीं बेहोष ही रह गये । उनकी ऑखें खुली थीं पर मूक और उज्जवल थीं ।

●

'हुजूर ! खेलने नहीं जाइयेगा ?'

'कहां ?'

'क्लब में ।' अर्दली ने नम्रता से उत्तर दिया

'नहीं ।' मिस पंत ने कहा । मानों वे किसी विचार–धारा में मग्न थीं, किसी ने उन्हें पुकारा और सहसा उनके मुख से निकल पड़ा हो 'नहीं ।'

'हुजूर ! कई दिनों से सिविल लाइन के चपरासी आपको क्लब में ले जाने के लिये आते रहते हैं'।'

'तब, स्वप्निल अवस्था में मानो वे पूछ रही थीं,

'हुजूर ! आप दोपहर के बाद ही से न जाने कहां चली जाती हैं ।'

उस दिन, डिप्टी साहब, कप्तान साहब, मुंसिफ साहब और तीन–चार, मैं पहचान नहीं पाया, आये थे, और बड़ी देर तक यहॉ आप की राह देख रहे थे ।'

'हुजूर ! आप की तबीयत इन दिनों कुछ खराब रहती है ?

'नही तो ।'

'फिर आप इतनी चुप क्यों .... ? अ .... कल तो मि0 मेहरोत्रा और खान साहब आये थे । वे लोग तो हुजूर यहॉ बहुत दिनों के बाद आये थे, फिर भी आप से भेंट न हुई ।

'भेंट'

'हॉ हुजूर ।'

मिस पंत की तंद्रा षायद अब टूट गई हो । उन्होंने रूमाल से अपने व्यथित ललाट को पोंछा, एक निःष्वास निकालती हुई बोलीं –

'अब मैं खेलने नहीं जाया करूँगी, उन लोगों से कह देना .... ।'

'किनसे हुजूर ! बीच ही में सहसा अर्दली ने टोका ।'

'जो लोग यहॉ आते हैं, ... कि मेरी तबीयत आज कल ठीक नहीं रहती, षायद मैं अब कभी न उन लोगों के साथ खेल सकूँ ।'

'ऐसी बात हुजूर ! अर्दली ने आष्चर्य से पूछा ।'

मिस पंत चुप थीं, उन्मुक्त ऑखें कहीं दूर तक देख रही थीं । चंचल मुख पर इतनी गम्भीरता ! नित्य का अर्दली समझ न सका उस गम्भीरता को ! वह चुपके से बाहर चला गया ।

'मैं क्या हूँ ? षायद इसे कोई नहीं जानता । फिर भी तो मेरा सम्मान है । पर इससे क्या ? मैं समझती थी कि मेरे पास क्या नहीं है । पर दिल में किस वस्तु के लिये कचोट है यह भी नहीं मालूम । मैं किसी वस्तु के लिये सिहर उठती हूँ । वह कौन–सी वस्तु है ? कितने मूल्य पर मिल सकती है ? मेरे पास धन है, रूप है, सम्मान है सब है, पर दिल कभी–कभी कहता है, कुछ नहीं है । वह कौन सा आभूषण है ? कौन–सी निधि है ? क्या इस जीवन के पीछे कुछ छिपा है ? मेरा कुछ आदर्ष है ? .... 'सुधा एक नारी थी, पर पत्नी थी किसी की । उसमें प्रेम की कितनी क्षमता थी, वह कितनी पूर्ण थी अपने नारीत्व में ।' तो क्या मैं अपूर्ण हूँ ?

'मिस पंत तंद्रिलावस्था में थी । वे उद्विग्न थीं । हृदय में कितने प्रष्न उठ रहे थे । पर उत्तर क्या है ? वे नहीं जानतीं । अन्तिम प्रष्न पर वे कब से सोच रही थीं । उनके हृदय से उत्तर आ रहा था 'हां ।' वे सिहर उठती थीं इस उत्तर पर । वे अब तक अपूर्ण थीं, यह उन्हें अब ज्ञात हुआ । यह कैसे ? किसी के दाम्पत्यजीवन को देखकर, प्रणय–बंधन में बॅधे हुये नारी और पुरूष को देखकर । पुरूष एक था । वह था पति। नारी एक थी, वह भी उसकी पत्नी । यह था दोनों का सम्बन्ध । इसके लिये वे ललचा उठी थीं एक समय । अब वही मिस पंत के हृदय में एक समस्या बन

आई है । वह थी किसी की प्यारी पत्नी, किसी की माता । दोनों आज पागल हैं । कोई 'सुधा' को 'पत्नी' रूप में खोज रहा है, कोई माता के रूप में । वह कितनी पूज्य थीं, कितनी प्रिय थीं ?'

'तो वह सुधा माता थी और थी मि0 कर्नल की एकमात्र पत्नी । अब वह नहीं हैं, इसी से मि0 कर्नल पागल हैं । मुझ पर कोई पागल होने वाला नहीं । इस वासना की दुनिया में यही हो षायद मुझ में अभाव । 'इन्दू रानी' इतनी बड़ी हो गई, उससे मैंने कभी 'मॉ' नहीं कहलाई । मेरी यह चोरी ! मेरे वे पाप ! मेरी यह ठगी ! कितनी सुन्दर थी सुधा अपने पत्नी और मॉ के रूप में ! संसार के सामने मेरा क्या रूप था ? पर मैं क्या थी ? आज हृदय कहता है कि कह दूॅ उस छिपे हुये रूप को । – काष ! मैं सुधा के स्थान पर हो पाती!

'मेरी सुधा ! मेरी सुधा ! मेरी सुधा ! मेरी रानी !

'षान्त रजनी में किसी की आह में यह पुकार आ रही थी । रात्रि का प्रथम प्रहर था । मि0 कर्नल के कमरे में मन्द स्मित आलोक था । सामने सुधा का चित्र टॅगा हुआ था । वे उन्मुक्त ऑखों से देख रहे थे उस मूक चित्र को । हृदय कुछ प्रष्न कर रहा था, पर चित्र से उत्तर कहां ? हृदय में टीस उठी, वे फिर चिल्ला उठे 'सुधा ! सुधा ! –

सहसा किसी की आहट हुई । उनकी बरसती हुई ऑखें फाटक की ओर गईं । हृदय ने डपटकर प्रष्न किया – 'कौन ?'

'मैं, लेडी डाक्टर ।'

वे डर गईं । सरकती हुई कोच पर बैठ गई । मि0 कर्नल का पागलपन, प्रेम की क्षमता, विप्रलंभ । मि0 कर्नल चुप थे, ऑसू का बहना बंद हो गया। वे देख रहे थे मिस पंत को लम्बी सॉसें भरते हुये । मिस पंत 'सुधा' बनने आई थी । एक याचना करने आई थीं पर हृदय में साहस न था बोलने तक का भी । नारी की इतनी षिक्ष, इतनी वाक्पटुता, रूप, गौरव, व्यक्तित्व आज न जाने कहां था ? वे स्वयं सोच रही थीं इसी के ऊपर, तब तक मिस्टर कर्नल चीख उठे ।

'मेरी सुधा रानी !'

'क्या मैं बोल दूॅ सुधा के स्थान पर ?' सोचते हुये मिस पंत कांप उठीं, पर उनकी ऑखें भर आईं पत्नी–भावना से । उनमें साहस आया और आष्वासन देने लगीं मिस्टर कर्नल को । उनकी ऑखें अपनी 'सुधा' को ढूॅढ़ रही थीं हृदय पुकार रहा था 'सुधा–रानी' को । अतः इसके उत्तर में जब मिस पंत का स्वर आता था तब वे जल उठते थे । कॉपता हुआ हाथ कमर पर पिस्तौल ढूॅढ़ने लगता था । सहसा न जाने कहॉ से विचार आते थे और सुधा के सामने मिस पंत बच–सी जाती थीं – ।

हास्पिटल के बाद मिस पंत अधिक समय के लिये मिस्टर कर्नल के साथ रहती थीं । मिस्टर कर्नल बार–बार सोचते थे पाप की प्रतिक्रिया पर । हृदया बह जाता था उनकी आजकल की सहानुभूति से । 'क्या उन्होंने कभी सोचा था ? प्रष्न किया था कि आखिर वे क्यों नित्य उनके साथ रहती हैं ? (उनकी एक घंटे की फीस षहर में 20) है । कितने रूपयों को न्योछावर किया है उन्होंने उन पर ! मिस्टर कर्नल ने आज सोचा है इस बात पर । सुधा आज कितने

दिन हो गये, इस संसार में नहीं है । मिस्टर कर्नल पत्नी के वियोग में जीवित नहीं रहना चाहते, पर जीवित हैं । सचमुच मनुष्य मर कर भी इस भॉति जीवित रहता है ।

'क्या एक बार भी मेरे बॅगले पर नहीं .... !'

'क्या है ?'

'यहीं, कि आज आप को मेरे बॅगले पर चलना होगा ।' मि0 मित्तल जिलाधीष ने प्रार्थना–स्वरूप में कहा । मिस पंत चुप थी । उनके चेहरे पर गम्भीरता थी । ऐसा मुख–मंडल जिलाधीष ने पहले नहीं देखा था । पर वह मुख था मिस पंत ही का ।

'आजकल आप इतनी चुप क्यों रहती है ? षायद इसका आपने कोई इन्जेक्षन तो नहीं ले लिया है ?' उन्होंने हॅसते हुये कहा ।

'नही तो .... मेरी तबीयत आज कल .... ।'

'हॉ–हॉ, पर मैं तो हूॅ । मैं आपको कितना प्यार करता हूॅ !'

'पूरी सिविल लाइन रूठ जाये, कोई बात नहीं । मैं यहॉ का कलक्टर हूॅ ।'

'मेरे लिये आप नहीं हैं । किसी की हस्ती ही क्या ?'

'क्या कहूॅ ?'

'वहीं मेरी रानी .... ।'

'नहीं, आप गलत कहते हैं । मैं नाचने वाली थी आपके सामने । रहने दीजिये 'रानी' षब्द मेरे लिये । बहुत साधना के उपरांत यह संज्ञा मिल सकती है।'

'मिस पंत ने एक दीर्घ निःस्वास लिया, उनकी पलकें उठकर सामने वातायन से षून्य की ओर टिक गईं । उसमें एक चित्र बन आया – 'वहीं रोगिणी सुधा बेहोष पड़ी है वीमन वार्ड में, मि0 कर्नल पागल से दौड़ रहे हैं इधर–उधर, वे गिड़गिड़ाते हुये किसी से कहते हैं 'बचाओ मेरी रानी को ।' यही था चित्र उस मूक याचना में । 'मिस पन्त चुप थीं । उन्हीं की आत्मा उन्हें धिक्कार रही थी । क्या उन्होंने पहले यह नहीं समझा था कि सुधा किसी की धर्म–पत्नी है ? वह कर्नल की एकमात्र रानी है, उनकी अतुल सम्पत्ति है । और अ बवह नहीं है । उनकी दुनिया उजड़ गई है । क्या अब मैं उनके पतझड़ में बसंत की छटा ला सकूॅगी ? न जाने क्या होगा ? क्या मैंने भूल की ? नहीं, मैंने पाप किया । पर मुझे अब भी आषा है कि मैं कर्नल को सुधार सकूॅगी । उनकी सूनी दुनिया में बहार ला सकूॅगी । कितने अच्छे हैं कर्नल ! किसी के पति थे, अब .... ।'

''पर मुझे इन लोगों से छुट्टी नहीं ।''

मिस पंत ने भूखी तथा चोट खाई हुई षेरनी की भॉति जिलाधीष को फटकारते हुए कहा 'यह आपसे आषा न थी ।'

उठते हुए मि0 मित्तल ने कहा – 'क्षमा करियेगा, अब नं जाने मुझे क्या हो गया है ? क्या मैं जान सकता हूँ वह रस्य ?'

'नहीं' मैं स्वयं नहीं समझ पा रहा हूँ ।'

क्षमा ! क्षमा ! ईष्वर तुम भी मुझे क्षमा करना ।

मिस पंत बहुत उदास थीं अपने अकेलेपन में । उनके सामने कितनी समस्यायें थीं ! उन्होंने किसी का घर उजाड़ा केवल अपना घर बसाने के लिये । एक हत्या की – वह भी नारी–हत्या किसी को अपना कहलवाने के लिये । इतना बड़ा पाप एक निधि के लिये । वह भी आज हाथ से छूटी जा रही है । अब मि0 कर्नल न जाने क्या करेंगे ? काष वे रह जाते मेरे साथ । वे एक बार सुधा को भूल जाते । मैं सर्वस्व उन पर न्यौछावर कर डालती । दूसरी समस्या थी नारी की एक महान् भूल की । जब कि उसने जीवन का मूल्य तथा ध्येय कुछ और ही समझ लिया था, वही भूल अब तक चली आ रही है ! उसी ने अपनी ओर से कुत्तों का एक झुंड पाल रक्खा था । वे सब उसके समीप थे । अब भी उससे सटकर रहना चाहते हैं । यद्यपि अब नारी उन्हें एकदम नहीं चाहती । यहां क्यों कि अ बवह उन मुखों पर पाप की कालिमा देखती है, जहॉ पहले वह विभिन्न रूप देखा करती थी । उसे अब विष्वास हो गया कि उन मुखों की कालिमा उसी के पापी मुख की प्रतिछाया है। अब वह क्या करे इसी से छुटकारा पाने के लिये उसने इतना बड़ा पाप किया ! पर परिणाम न जाने कितना भयानक होगा ? मिस पंत डर से कॉप गईं । आज नारी ने सर्वप्रथम यह समझा कि वह सचमुच अबला है, सबला नहीं ।

'क्या खून का बदला खून ? नहीं, यह दूसरा पाप होगा । मिस पंत नारी है, मैं उसे क्षमा कर दूँ । नहीं, सुधा की आत्मा को षान्ति न मिलेगी । तो ?' मिस्टर कर्नल उदास मुद्रा में अपने कमरे में बैठ थे, सामने सुधा का चित्र था । आज वह चित्र प्रष्न कर रहा था कि मेरी हत्या क्यों हुई ? इसका प्रतिषोध क्या है ? मिस्टर कर्नल चिन्तित थे । तुम्हारी हत्या मेरे पापों का फल है । मैंने अपने सैनिक–जीवन में न जाने कितने निरीह मनुष्यों की हत्या की है ! वह क्यों ? मेरा कर्त्तव्य था वैसे ही तुम्हारी मृत्यु हो गई । पर कौन जाने, मिस पंत ने सुधा की हत्या की हो अपने स्वार्थ के लिये क्या यह एक नारी के लिये उचित है ? नहीं, यह मेरे पापों का फल है । तो तुम्हारी मृत्यु का प्रतिषोध क्या होगा, हत्या ? नहीं, मानवता की सेवा और स्वार्थ–त्याग । यह सात्विक प्रतिषोध होगा ।

मिस्टर कर्नल खड़े हो गये । घड़ी ने बारह बजाया । उन्होंने एक बार सुधा के चित्र को खूब जी भरकर देखा, फिर बगल के कमरे में घुस गये । महेन्द्र बिजली के नीले प्रकाष में सो रहा था । वह कितना भोला और सुकुमार आज लग रहा था । मि0 कर्नल की दृष्टि महेन्द्र के मुख पर टिक गई । वे बरबस उस ओर खिंचने लगे, यद्यपि महेन्द्र को अंतिम बार देखने आये थे ।

''कितना अच्छा महेन्द्र है ! क्या मैं महेन्द्र को छोड़ दूँ ? नहीं, यही सुधा का प्रतिरूप है । मैं इसी को लेकर क्यों न बाकी जीवन व्यतीत कर दूँ ? क्या कोई पिता अपनी प्रिया की खोज में एकलौते पुत्र को त्याग देता है ? हॉ सब कुछ त्याग देता है । और मुझे तो अब दूसरे कर्त्तव्य पथ पर चलना है । वह कितना बिकराल पथ होगा – ''महेन्द्र !

मेरे लाल ! तुम्हारा पिता तुमसे विदाई लेने । आया है । दे दो, मेरे ही पाप के कारण आज तुम भी एकाकी होने जा रहे हो । ईष्वर तुम्हारी रक्षा करें ।

'सुधा के प्रतिरूप ! प्रतिनिधि ! कितने अच्छे हो तुम ! मि0 कर्नल का तीव्र–हृदय–सागर उमड़ आया और चलते समय उन्होंने उस प्रतिरूप के ललाट को चूम लिया ।

''इस सूनी रात में यहॉ अधिक देर रूकना उचित नहीं । अरे, मैं कैसे यहॉ आ पहुॅचा ?'' मि0 कर्नल अजीब मुद्रा से मिस पंत के सिरहाने खड़े थे। उन्होंने कमरे में प्रकाष किया और देखा मिस पंत को । वह अस्तव्यस्त थीं । बाल बिखरकर मुख के आस–पास सटे थे । मिस्टर कर्नल ने अपनी रिवाल्वर सॅभाली । उन्होंने फिर से देखा, यह मरी थी । सामने नारी अचेत सो रही थी । उसमें अबलापन था और एक बेबसी की रेखा उसकी बंद पलकों के ऊपर उभर आई थी । क्या यह चुड़ैल वही है ? इसी ने तो मेरा सर्वस्व खोया है । समाज को पंगु करने वाली कोट ! एक मुट्ठी में मसली जा सकती है। उन्होंने फिर अपने निषाने को देखा, पर उनका हृदय कॉप उठा । वे अपने कर्त्तव्य–पथ से हट रहे थे उन्हें सहसा ज्ञान हो आया कि मिस पंत नारी है, सुधा की जाति की । उसे सॅभलने को समय मिलना चाहिये । पर इसपर क्या आषा की जाय ? फिर न धोखा हो जाय ? नारी–हृदय कितना अदृष्य तथा गूढ़ है ! काष । मेरी आन्तरिक पीड़ा इसको उत्तम मार्ग पर, नारी–पथ पर चला पाती । यही मेरा प्रतिषोध हो जाता । फिर भी इसकी सुप्त चेतना जगानी सी होगी । काष ! देष का समस्त नारी–वर्ग मेरी सुधा सा हो जाय । मिस पंत नारी है, इसे क्षमा । मि0 कर्नल ने क्षण भर में न जाने कितने तर्कों का सहारा लिया । उन्होंने अन्तिम निर्णय किया । इस अंधेरी रात में उनका मार्ग स्पष्ट झलक रहा था । दुनिया को छोड़कर उन्हें उसी पर चलना है। उन्होंने अन्तिम बार न जाने क्यों मि0 पंत को खूब देखा और रिवाल्वर की समस्त भर गोलियॉ बिखेर दीं उसके सिरहाने । क्षीण प्रकाष में उस अलौकिक सौन्दर्य पर एक कहानी उभर आई थी । उन्होंने हिंसा के स्थान पर एक पत्र लिखा । देर करना उचित न था। बाहर कोई पक्षी बड़ी भयानक बोली बोल रहा था । कर्नल के पैर स्थिर थे मिस पंत के सिरहाने । उन्होंने अपना सब–कुछ छोड़ दिया उनकी ममता पर । चलते समय उन्होंने तेज चाल से उनकी गोरी पतली कनिष्टिका का अग्रभाग काट लिया, फिर अदृष्य ।

मिस पंत चीख पड़ीं ''चोर ! चोर !!''

हाथ पकड़ते ही दॉयीं अन्जली भर गई निकलते हुए ताजे रूधिर से । नौकरानी दौड़ती हुई सामने आई – सॉप ! सॉप !!

कमरे में प्रखर प्रकाष हुआ । बिस्तर पर खून के लम्बे चौड़े धब्बे पड़े थे । उन्हें आषक्का थी किसी और वस्तु की । परन्तु बिस्तरे पर बिखरे हुये बुलेट्स को देखते ही उनकी ऑखें गोल हो गईं । हृदय धक् से हो गया । सिरहाने के दूसरे ओर किसी ने अपना वेग रख छोड़ा था । पीड़ा उत्सुकता बन गई, फिर वही कुतूहल में परिणत हुई । उन्हें ध्यान नहीं रह गया अपनी कटी हुई अंगुली का ।

''अरे, ये बुलेट्स ! फिर भी रिवाल्वर के ?'' उनके मुॅह से सहसा निकल पड़ा । नौकरानी के कान खड़े हा गये । वह चिल्ला उठी – डाकू ! डाकू !!

मिस पंत चुप थीं । वे कुछ देख रही थीं । तर्क और आषक्का से उनका मानस घटाटोप हो गया । उन्होंने नौकरानी को कमरे से बाहर जाने को कहा ; और यह भी चेतावनी दे दी कि इस घटना को किसी से कहे नहीं ।

अभी बाहर घोर अन्धकार था । यद्यपि पॉच बज चुके थे । ष्मषान–सी नीरवता में कोई पंछी बोल रहा था । वह बेला भयानक थी । मिस पंत सिहर–सी उठीं । वातायन से उन्होंने देखा कि कोई उज्जवल नक्षत्र डूबने जा रहा है । सहसा उन्होंने अपने ॲगुली देखी । अविरल रक्त–धारा–प्रवाह से उनका अंचल भीग चुका था । कमरे की सिहरती हुई फिजा प्रष्न बन–बनकर आ रही थीं । उन्होंने आष्चर्य से देखा, बैग के लेबिल पर एक अंग्रेजी में नाम छपा था – ''कर्नल आर0 पी0 सिंह ।''

मिस पंत का सिर घूम गया । आषंकित कहानी उनके सामने बिखर गई । उसमें तत्परता थी । ' क्या उन पवित्र हाथों से यह अंगुली काटी गई ? तब तो यही मेरा अमृत–पाथेय होगा । पर नहीं, उनके पास तो पिस्तौल थी । यह बुलेट्स उनके ही हैं । उन्होंने इस कलुषित जीवन–कहानी को क्यों नहीं खतम कर डाला ? पर यह बात क्या ?''

''आह ! कर्नल !' निःष्वास लेती हुई उन्होंने बैग की ताली दवाई । चटकता हुआ बैग का मुख खुल गया । वह पूरा भरा था, ऊपर था एक पत्र । पत्र लेते ही उनके रौंगटे खड़े हो गये, नसें फूल आई । मुख लाल हो गया । धरती घूमने लगी ।

''उन्होंने आत्म–हत्या .... ।''

मिस पंत ! नमस्ते ।

पाप का फल अभिषाप है । देष की पुकार पर मैं पाप का प्रायष्चित्त करने जा रहा हूॅ । यही है अन्तिम और पुनीत बलिदान–पथ । यही है एक मात्र पथ तुम्हारे लिये भी । मैं तुम्हें इस कलुषित जीवन से विमुख करने जा रहा था । पर बरबस खिंच गया न जाने क्यों तुम से ! तुम .... बढ़ो .... अच्छा

मेरा सर्वस्व तुम्हारे हाथों में है । महेन्द्र अब तुम्हारा है । बैग को देख लेना । बस, यही है अन्तिम विष्वास मेरा तुम पर । षायद फिर कभी मिल जाऊॅ पथ–पर .... ।''

तुम्हा .... 'देष .... सेनानी ।' आर0 पी0 सिंह

पत्र क्षण भर का था । एक दृष्टि में इसकी कहानी थी । उन्होंने बार–बार पढ़ा, पर सन्तोष नहीं । जीवन ठेस से यह परिवर्त्तन ! क्या मेरी तपस्या आज ही से आरम्भ होगी ? काष कुछ दिन के लिये मिल जाते तो मेरे जीवन–साथी ! वे सिर थामकर बैठ गईं सामने कोंच पर । रह–रह के सर घूम जाता था विचित्र समस्याओं और भावनाओं से । 'क्या मिस्टर कर्नल मेरे हो गये थे चलते समय ?

हॉ उन्हें ममता आई होगी । वे कितने अच्छे थे । ''तुम्हा .... इसके आगे क्या 'रा' भूल गये ? नहीं, वह मेरी साधना के लिये छूट गया है । यही है मेरी मंजिल जिसे मुझे तैं करना है । पत्र और बैग वहीं था ऑखें षून्य अंधेरे में किसी की मीठी फटकारी प्रतारणाओं के बीच मुख देख रही थीं । उनकी ऑखें अमुक थीं । पलकें भारी थीं कर्नल का वह

लाल मुख उन्हें रूला रहा था । कितनी मीठी थी फटकार ! हृदय से एक हूक निकली । सहसा बाहर से उनकी नौकरानी ने पुकारा ''साहब ! उठिये !''

'इन्दु रानी बीमार है जल्दी आइये ।' पूर्णिमा बहन का तार था । नारी के सामने कर्त्तव्यों का कितना विकराल सिंधु बहने लगा आज ! इनकी जीवन परिभाषा बदल गई । अब वे दिन अंतीत के थे, जब उस पर कुछ जिम्मेदारी न थी । पर आज मोह ! कर्त्तव्यों का घटाटेप ।

'ईन्दु रानी उनकी बालिका है ।' यही है नारी का आभूषण । इन्दु का वास्तविक रूप उन्हें आज दीख पड़ा । अब तो एक ओर महेन्द्र उन अंचलों के नीचे है और दूसरी ओर 'इन्दु' । नारी अब आगे बढ़ने जा रही थी 'इन्दु' को लोरियां सुनायेंगी । इसी को छिपाने के लिये उन्होंने क्या नहीं किया ! पिकनिक में पाप की चरम–सीमा से ही तो वह लड़खड़ाई थी । नीचे गिरते गिरते उनका खून, खून हो गया था । उन्हें उस दिन कितना डर मालूम हो रहा था ! इस रहस्य के खुल जाने में । पर आज उनका मातृ–हृदय पुलकिल हो रहा है अपनी 'इन्दु' को सुनकर ।

पर क्या वह इन्दु उनकी है ? क्या उसने कम लोरियाू सुनी हैं मातृ–अंचल से सोकर, चॉद को देखा है मॉ के इंगित से ? हृदय पर कभी बालिका ने दाग लगाया है मिट्टी या कीचड़ से ? क्या कभी उसने अपने पूर्वजों की कथा सुनी है मातृ मुख से । क्या उसे कभी मॉ के सुन्दर और कड़ये चॉटें मिले हैं ? नहीं कभी नहीं । हॉ, वह जानती है कि वह एक बहुत बड़ी साहिबा की दुलारी लड़की है । विला जाने वह अपने को देखती थी भारतीय बच्चों से अलग ; ॲग्रेज बेबी की भॉति उसकी षिक्षा कुछ और ही ढंग पर आरम्भ हुई है । वह कालेज में दसवीं कक्षा में पढ़ती है । चौदहवॉ वर्ष है पर साड़ी देखकर हॅसती है । लम्बा रेष्मी फ्राक ऊॅची ऍड़ी का सैंडिल, लम्बे केष, इठलाती हुई, सुगन्ध बिखेरती हुई वह कालेज को मात करती थी ।

उसने अपने जीवन को सब से कुछ ऊपर देखा, उसकी मंजिल कुछ थी । मंजिल का पथ उसकी मॉ ने इंगित कर दिया था । वह उस पर बढ़ी जा रही थी । मॉ तब फूलो न समाती थी अपनी बालिका को देखकर । वह बात–बात में दाद देती थी । बालिका को प्रोत्साहन मिलता था, धन मिलता था, समय मिलता था और मिलती थी आजादी उसे वैसा बनने में ।.... पर नारी मॉ बनी । मातृ–हृदय भावना–मय हो गया । उसके विचार बदले । उसने पाप धोया । उसे सहसा याद आई अपनी बिगड़ती हुई बालिका की । उसे पीड़ा हुई, उसने अभी तक कुल्हाड़ी मारी थी अपने पॉवों में । रक्त बह चला । ऊपर से ॲगुली का रक्त नीचे मिल गया पॉव के घाव में । वे चीख उठीं.... तार को हाथ में लिये ।

स्नेहलता अभी कालेज से न लौटी थी । यह पूर्णिमा पंत की बालिका है । इन्दु और स्नेह, दो बहनों में अब तक प्यार था । पर आज कितने दिन हो गये । इन्दु बोलना नहीं चाहती स्नेहलता से । इसका कारण क्या था ? बस यही, कि एक की विचार–धारा दूसरी से प्रतिकूल दिषा में बहती थी । इन्दु, चार दिन हो गये, कालेज नहीं गई । वह षायद बीमार है ।

'तुम्हें क्या हो गया है इन्दु ?' मिस पंत ने प्यार से पूछा । वह चुप थी । मिस पंत बीमारी का कोई लक्षण न पा सकीं । हॉ, नाड़ी कह रही थी कि हृदय में चिन्ता है और है मन में उदासी । कप्तान साहब पूर्णिमा पन्त के सामने थे । वे लोग आष्चर्य में थे कि इन्दु आज क्यों चुप है, यद्यपि उसकी बीमारी एकमात्र बहाना है । 'इसे कुछ दिन के लिये अपने साथ रखिये' पूर्णिमा ने कहा ।

'अच्छा, यह बात है ? किन्तु ! तुम अब सयानी हो, तुम्हें, रूठना नहीं चाहिए बोलो, बात क्या है ?''

वह फिर भी चुप थीं । उसका चेहरा तमतमाया हुआ था । भौंहें चढ़ी थीं, आंखों में क्रोध के ऑसू थे। मिस पंत ने ललचा कर उसका ललाट चूम लिया और बोलीं 'बात क्या है रानी !'

'कुछ नहीं ।' एक छोटा–सा उत्तर दिया इन्दु ने ।

'तब पढ़ने क्यों नहीं जातीं ?' तुम्हारी फाइनल परीक्षा है ।'

'इससे क्या ?'' रानी के उत्तर में धृष्टता थी । उसे गर्व था स्वयं अपने पर । उसके हृदय में थोड़ा भी आदर नहीं था अपनी मॉ के लिये । क्योंकि यह इस दुनिया से दूर पली थी । कैसी मॉ, क्या बंधन ?

षाम हो गई । बाहरी दालान में कप्तान साहब और मिस पंत आमने–सामने कोच पर बैठे हैं । वातावरण षान्त है । मिस पंत गम्भीर थीं । ऐसी गम्भीरता कप्तान साहब ने कभी भी पहले उनके मुख पर न पाई थीं । उन्हें आज की मिस पंत कुछ दूसरी–सी लग रही थीं । उन्हें आष्चर्य हो रहा था उस परिवर्त्तन पर। वे कभी–कभी गंभीरता में डूबे से जा रहे थे । उनकी वह इठलाती चाल, हॅसता हुआ मुख कहॉ है, षायद वे इसी के तलाष में थे । न वह क्लब की मीठी बातें थीं न स्वप्नों का संसार था । 'वे क्यों कल ही जाने वाली है ? आखिर इतनी जल्दीं क्यों ?' उन्हीं को आष्चर्य ही था । कुछ इधर–उधर की दो बातें और कुषल समाचार के उपरान्त वे बढ़ गईं 'स्नेह लता' के कमरे की ओर ।

कप्तान की एक मात्र लड़की और जीवन का यह आदर्ष एवं साधना । उसकी विचार धारा उसके रहन–सहन से प्रकट थी । कमरे में प्रमुख नेताओं के चित्र के बीच रहे थे । जगह–जगह उपदेष लिखे पड़े थे षीषे के बीच । टेबिल के किनारे किताबों से सजी आलमारी खड़ी थी । मिस पंत का हृदय भर गया कमरे में पैर रखते ही । स्नेहलता ने अभिवादन किया ।

मिस पंत इतनी क्यों आज खुष थीं, स्नेहलता स्वयं नहीं समझ पा रही थी इसके पहले मिस पंत ने कई बार उसकी अपेक्षा की थी । स्नेहलता ने उसे स्वीकार किया था ।

'इन्दु को क्या हो गया है ? स्नेहलता !

वह भी कुछ सोचने लगी ।

'बोलो क्या बात है ? मिस पंत ने पूछा ।

स्नेहलता अपनी लम्बी गोरी अंगुली में अपने अंचल का छोर लपेटती जा रही थी । ऑखें सामने स्थिर थीं । सहसा पलकें मारी हुई, फिर बरस पड़ी उसकी दोनों ऑखें । भीग गयी उसका अंचल गालों से सरकते हुए गर्म–गर्म ऑसुओं से । मिस पंत स्तंभित हो गईं । लपक कर उन्होंने गोदों में भर लिया फफकती हुई स्नेहलता को । उन्होंने झट

अपने दामन में संचय कर लिया उसकी उद्वेलित अश्रु राषि को । फिर भी उसके गालों पर चार बड़े–बड़े अश्रु–विन्दु झलक रहे थे ।

''मेरे अपराध से इन्दु ने कालेज जाना बन्द कर दिया है ।''

''क्या बात है मुझसे कहो ।

'सुनियेगा !'

'हॉ ।'

'अच्छा सुनिये, स्नेहलता बड़ी–बड़ी ऑखों को नीचे कर बोली ।'

''जगदीष यहां के जज का लड़का है । वह हमारे कालेज से बाहरवें कक्षा में है । बहुत दिनों से वह रानी से मिल–जुल रहा था । पर तब वह सभ्य था । हम लोग उसके घर आती जाती थीं पर .... अ .... ''

'हॉ तब !'

'तब यही कि पिछले सप्ताह में रानी से कुछ बेकार की बातें करता रहा । रानी खुष थी । पहले मैं कुछ के लिये अनसुनी सी करती रही पर उस दिन मैंने बीच सड़क पर उसे बुरी तरह से फटकार दिया । इन्दु मुझसे लड़ गई वही मैं तब से इसे मनाती ही रह गई पर ये तब से .... ।'' .... मैंने उसे अभी तक किसी से नहीं कही थी .... ।

अच्छा ; .... तुमने कमाल किया स्नेहा ! मिस पंत ने निःष्वास भरते हुए कहा मॉ के सामने उसके पाप चित्र से झलक उठे । मॉ पछाड़ खा गई । पर दोष था मॉ का । अब वही हाथ मले । उन्होंने हृदय में अपने को कोसा और रो लिया चुपके से अपने पहले के आदर्ष पर ।

'अभी तो आप रहेंगी .... ।

'नहीं, बेटी, सुबह ही जाऊॅगी, इन्दु को लेकर ।'

'क्यों इतनी जल्दी .... ?, स्नेहलता ने आष्चर्य से पूछा ।'

'फिर बताऊॅगी बेटी .... । मिस पंत उदास थी । उस उदासी में ममता थी, दया थी । स्नेहलता इस बार मिस पंत से बहुत खिंच गई । वह देखती तो रही उस उदास और पीले मुख को ।'

महेन्द्र आज बहुत उदास था मिस पंत के बॅगले पर । उसे देखते ही देखते मॉ का स्नेहॉचल छूट गया । पिता चुपके से चले गये अपने साधना–पथ पर यद्यपि वह नवें कक्षा में है और वह चौदह वर्ष का है फिर भी बालक है माता–पिता से छीना हुआ । पर वह घटना अचूक न थी किसी के लिये । महेन्द्र सॅभल गया अपनी जिम्मेदारी पर । उसके पिता कहॉ गये, जीवन का अन्तिम उद्देष्य क्या है । उसे उसने जान लिया इन घटनाओं से । वह भी निराष होता कभी आषा बांधता बहुत कुछ करने के लिये । देखते ही देखते उसके मुख पर की चंचलता गंभीरता में परिणत हो गई । उसका बालकपन बौद्धिकता में बदल गया।

फिर भी वह उदास था । आज अपने एकाकी जीवन में वह राह देख रहा था मिस पंत की । वह इनमें मातृ–हृदय पा रहा था । मिस पंत के रहते हुये उसे कम याद आती थी अपने मॉ–बाप की । मिस पंत ने भी उसे छिपा

लिया था अपने सुखद–दामन में । षाम हो रही थी । सड़कों से तेज सवारियॉ आ–जा रही थीं। वह कब से देखता रहा । सहसा वहीं उसकी ऑखें लग गई सोफे में ।

''बेटा ! किसी का मृदुल स्पर्ष स्पर्ष था पुकार के साथ ।''

'हॉ, नमस्ते ।' अलसाई हुई ऑखों से महेन्द्र ने देखा मॉ के पीछे एक सुन्दर आकृति और चलती हुई मूर्ति उन्मुक्त देखने लगा । उन स्वतंत्र ऑखों में उपेक्षा की भावना थी महेन्द्र पर ।

'यही इन्दु है महेन्द्र ! दसवीं कक्षा में पढ़ती है ।' मिस पंत ने कहा ''इन्दु ! आज तक आपने कभी .. .. ।'' सभी कमरे से भीतर जाने लगे । महेन्द्र घूम–घूमकर देख रहा था इन्दु को ।

''यह क्या है ?''

'चर्खा महेन्द्र का । पढ़ने के उपरान्त वह नित्य डेढ़ घंटा सूत कातता है । वह अपने काते हुए सूत से ही कपड़ा पहनता है । 'बड़ी बेवकूफी है ।' इन्दु ने उपेक्षा से कहा, जब हमें रेषमी और ऊनी कपड़े थोड़े दाम में मिल रहे हैं, तब इस घनचक्कर को चलाने से क्या फायदा ? अजब है ।'

'नहीं इन्दु, ऐसा न कहना महेन्द्र के सामने । नही ंतो उसे दुख होगा ।' 'ऐसी भी बात है ? अच्छा,आप से एक बात कहनी है ।'

'क्या ?' मिस पंत ने पूछा ।

'यही कि मैं अब वहॉ अलग बॅगला लेकर रहूॅगी । मुझसे साथ न चलेगा स्नेहलता से ।'

'क्यों ?'

'वैसे ही । मैंने आज तक बहुत–सी कठिनाई झेली उस बॅगले में । फिर भी नित्य ठेले पर आना–जाना –

'नहीं इन्दु, ऐसा न कहो। पूर्णिमा तुम्हें बहुत प्यार करती है । स्नेहलता देखो तुम्हें कितना चाहती है।'

'जैसे आप मुझे चाहती हैं ।' इन्दु ने बीच ही में बात काटकर कह दिया ।

'नहीं इन्दु, ऐसा न सोचो । तुम वहीं रहो ।'

'नहीं ; मैंने एक बार कह दिया । मैं किसी की गुलाम नहीं । मझे वहॉ तकलीफ है ।'

'तो पढ़ना ही छोड़ दो इन्दु, कुछ फायदा नहीं इससे ।' मिस पंत ने नम्रता से कहा ।

'नहीं, मुझे आप से राय नहीं लेनी है । मैं जब तक चाहूॅगी ....

मिस पंत के कान खड़े हो गये । ऑखों के सामने कितनी रेखायें खिंच गईं । उनकी नसें फूल आईं इस उत्तर को सुनकर 'मुझ पर दया करो इन्दु !'

'दया क्या ? आपने तो मुझे बहुत–सी बातें करने को बताई हैं, अभी तो मैं कुछ न कर पाई । आप की यह उन्नति कैसे हुई आपने बताया है उसे । कम से कम मुझे भी डाक्टरी पढ़नी है । सब .... है ।''

इन्दु सचमुच मॉ की बात कह रही थी । उसे यह कहने में कुछ संकोच कहॉ । उसे और बातें मालूम ही नहीं । वही आज प्रष्न बन बैठी थी मॉ के सामने । मॉ कभी पुलकित होती थी, इस पथ पर लाने के लिये।

आज केवल उस विचार को सुनते ही कॉप रही है । उसके सारे पाप डरावनी सूरत लिये ऑखों में छा जाते हैं।

'बोलिये ?' इन्दु ने कहा ।

मिस पंत चुप थीं, पर डर रही थीं भावी आंषका पर ।

'अच्छा, मैं कप्तान साहब से तुम्हारे लिये साइकिल खरीदवा दूॅगी ।'

'बस !'

'हॉ, बेटी, तुम उससे कालेज जाना ।' इन्दु सैन्डिल को दबाती हुई चली गई ड्रांइग रूम में । मिस पंत व्यथित हो गईं । हृदय का खून ऑख में आ गया । वे मूर्ति सी बैठी रहीं । उनके हृग–सम्पुट में ऑसूं छलक रहा था । सहसा किसी ने पुकारा ––

'मॉ !'

वे चौंक पड़ीं । सामने महेन्द्र खादी का लम्बा कुर्ता पहने कालेज से आया था । उन्होंने लपककर उसे भर लिया अपने अंक में ।

षायद अनुपम षोभा थी आज के सायंकाल की । बादलों के लाल–लाल टुकड़े स्थिर थे क्लक के ऊपर । लान में अफसरों की गोष्ठी बैठी है । कितने दिन हो गये, इनमें मिस पंत नहीं आतीं । परन्तु नित्य उनकी चर्चा होती है । आज उनकी विषेष चर्चा है । सभी आष्चर्य प्रकट कर रहे थे उनके परिवर्तित जीवन पर।

''एक बात नहीं सुना है आपने ?'' मिस्टर मेहरोत्रा ने मिस्टर खान से पूछा ।

'क्या ?' मिस्टर खन ने उत्सुकता से कहा ।

'मिस पन्त के बॅगले पर कल मैंने एक चीज देखी है । सचमुच पार्टनर, देखने लायक चिड़िया है !'

'क्या कुछ और है ?'

'हॉ, उसी आकृति की, एक हूर देखी है कल हमने अपने कार से ।'

'सचमुच ?'

'हॉ भाई ।'

'हॉ भाई, कल हमने अपने घर पर सुना है इसके सम्बन्ध में ।' मि0 कौल ने कहा ।

'हॉ हुजूर ! वह लेडी डाक्टर की लड़की है । क्लब के मैंनेजर ने कहा 'मैंने कल क्लब के हिसाब के सम्बन्ध में उसे उनके साथ देखा था ।

'सचमुच ?'

'हॉ हुजूर ! लेडी डाक्टर स्वयं कह रही थीं उसके बारे में । उसका नाम इन्दु है ।'

सब के कान खड़े हो गये । ''ओह ! यह रहस्य था ? उस दिन पिकनिक में वही किषोरी थी ? तीनों हॅस पड़े खिलखिलाकर । और बाकी लोग आष्चर्य ही में रहे !

'जंग में चलें पवन की चाल ।'

स्नसनाती हुई साइकिल के साथ उसका यह गुनगुनाता हुआ गीत वह चला । रेंगता हुआ ठेला कितने पीछे छूट गया । उसने घूमकर देखा स्नेहलता बहुत पीछे थी । उसकी उठी हुई ऑखों में आज नषा चढ़ आया । फिर चमकती हुई नई साइकिल ! वैसे कितनों की ऑखें खिंच जाती थीं ।

''जगमें चलें हवा की चा'' – उसने एक बार गाकर पाइडल पर धक्का दिया । सनसनाती हुई उसकी 'हरकुलिस' कालेज–लान के सामने थी । इन्दु ने फिर देखा दूर सड़क पर । स्नेहलता का ठेला दूर रेंग रहा था । उसके मुख पर एक मुस्कान फैल गई । ह्रदय ने कहा 'अब मुझसे क्या लड़ोगी ?''

'चलें हवा की चाल ।'

पर उस रेंगते हुए ठेले पर स्नेहलता खुष थी । उसकी भी दुनिया थी अलग, अपने हाथों से निर्मित। यदि वह एक बार इषारा किये होती, तो उसे भी साइकिल मिलती । पर पूर्णिमा पंत को याद थी अपनी बहन की चेतावनी ''मेरी इन्दु की हर बात में स्वतंत्रता होनी चाहिये, रूपये की कोई बात नहीं ।'' अतः उन्होंने कहते ही साइकिल खरीद दी । स्नेहलता को इससे द्वेष नहीं, जलन नहीं । हॉ है थोड़ा–सा खटकनेवाला, एकाकीपन।

'क्षमा कीजियेगा जगदीष बाबू ! मैं तब से आज कालेज आ रही हूँ ।'

'सचमुच ?'

'हॉ, मैंने साइकल खरीदवा ली है, अब स्नेहा दूर .... ।''

'अच्छा, अब तो हम लोग मिलते–जुलते रहेंगे ।'

'हॉ, साथ ही कालेज आया जायगा ।' इन्दु ने मुस्कराकर कहा ।

''यह पेषावर है ।''

जगदीष के कमरे में रेडियो ने कहा । छुट्टी का दिन है । जगदीष अपने ड्राइंग रूम में षोफे पर बैठा है । सामने रेडियो पर लहरें उठ रही हैं अलौकिक संगीत की । जगदीष बाबू तन्मय थे उस लय में । ऑखों में प्रतीक्षा भी थी किसी रूपरानी की ।

'यह कौन ? मैंने तुम्हारा हाथ पहचान लिया ।' ऑख पर रक्खी हुई हथेली को पकड़ते हुये उन्होंने कहा ।

'मैं कौन हूँ ?'

'यही हो तुम 'इन्दु रानी !'

'ह ! ह !! ह !!!'

गूँज उठा सम्पूर्ण ड्राइंग रूम दोनों के अट्टहास से । इन्दु सामने कोच में बैठ गई । उनके लाल ओंठों पर अभी भी मुस्कान बिखरी ही थी । ''आप संगीत में इतने तन्मय थे कि जान न पाये मुझे ।''

'तुम्हें और जान न पाऊँ ?' हॉ ! यह पेषावर है ।'

'तो क्या ?'

अभी एक सुन्दर गीत होने वाला है ।

''मैं पीती नहीं थी, पिलाई गई हूँ ।''

'वाह ! खुब ! क्या ही राज है इस गजल का ! जगदीष बाबू तन्मय हो गये, इन्दु के अधर–विन्दु पर मुस्कान खेल रही थी । संगीत की अन्तिम लहरियॉ कॉपती हुई विलीन हो गईं फिजा में ।'

'कितना सुन्दर है !' इन्दु ने समर्थन किया मन्द स्मित मुस्कान से । यह दूसरी भैरवी थी । इन्दु के कान खीझ गये गंभीर चीजों के सुनने से । ''बन्द करो जगदीष बाबू !''

अलापते हुये रेडियो के बटन पर जगदीष का हाथ पहुँच गया । बन्द होते–होते रेडियो ने गा ही डाला अपने गीत को ।

''यह नषा बस चार दिन का ।''

''बेवकूफ, हम लोग ऐसे ही रहेंगे । क्यों जगदीष बाबू !''

'हॉ, और क्या ? दोनों हॅस पड़े । इन्दु की हॅसी फिर मन्द स्मित मुस्कान बन गई । फैले हुये गुलाबी ओंठ सट गये पतली रेखाओं की भॉति । बीच में मिलन–बिन्दु उभर आया । उस पर मुस्कान खेल रही थी । जगदीष की उन्मुक्त ऑखें उस पर स्थित थीं ।

''दुनियां भी अजब मनहूसियत से भरी है जगदीष बाबू !'' जिसे ही देखो, सन्यासी हो रहा है । लड़कियों में भी क्या सनक आई है ! रेषमी साड़ी के स्थान पर कॉटेदार मोटा–सा खद्दर बस ।'

''सचमुच, इन्दु ।''

'हॉ, स्नेह की तो बात न पूछो ; 'कस्तूर बा' बनने जा रही है ।''

'पर तुम तो .... ।' जगदीष बाबू ने मुस्करा कर कहा ।

'यहीं तक नहीं, मेरी मदर लेडी डाक्टर हैं । मैं उनके पास गई थी । उन पर भी यही हवा ; अभी कल मैंनचेस्टर की साड़ी पहनती थीं – पर आज स्वयं बदल गई । सुन्दरता ने मनहूसियत का रूप बना लिया है .... !'

'सचमुच' यह हृदय की दरिद्रता है । जगदीष बाबू ने कहा ।

'क्या कहूँ ; मदर के साथ में महेन्द्र एक हैं ; उसमें भी वही इन्कलाब ; आप की तरह न सुन्दर टाई है, न उठी हुई कालर की कोट, न चमचमाते हुये सू, न और कुछ .... आप .... हैं ।'

'लगीं बनाने इन्दु ?'

'नहीं, मैं सच्ची बात कह रही हूँ जगदीष बाबू ! इस मनहूसियत पर तो मुझे गुस्सा आता है कि फूँक दूँ इन बैरागियों के मठ को ।''

'तुमने क्या–क्या कह डाला इन्दु !' इन्दु के हाथ को दबाते हुये जगदीष ने कहा ।

●

डिवेटिंग हाल में काफी सजावट है । दूर–दूर के विद्यार्थी आये हैं इसमें षरीक होने । सुबह ही से इसमें भीड़ है । स्थानीय कालेज की ओर से स्नेहलता का भी नाम आया है इस डिवेट में । घंटी बज गई, सभापति ने अपना स्थान लिया, भर गया हाल विद्यार्थियों से । गूँज उठी फिजा विद्यार्थियों की करतल–ध्वनि से। सामने षोफों पर इन्दु और जगदीष साथ बैठे हैं । दूर वक्ताओं के बीच स्नेहलता बैठी है गंभीर मुद्रा में । घंटी हुई, विषय का उद्घाटन हुआ, आ गया दूर के कालेज का एक विद्यार्थी विषय के पक्ष में बोलने । पूर्ण नीरवता में डूब गया हाल । युवक के व्यक्तित्व से प्रकाष हो गया । संकतेमात्र ही से, श्रोता प्रभावित हो गये, भाषण आरम्भ हुआ । वाणी डोल उठी । फैल गया भाषण का प्रवाह श्रोताओं के मानस में । कितना वेग था, जोष था, और थी गुदगुदी उस वाणी में ! मानों साक्षात् उस जिह्वा पर वरदानी बैठी हों । पर हॉ, वह था अजीब बोलने वाला । सभी डूब गये थे उस प्रवाह में । इन्दु सामने आष्चर्य में – 'अरे ! यहीं तो महेन्द्र है मेरी मॉ के साथ रहने वाला ! उन उठी हुई पलकों में रष्क था महेन्द्र के प्रति । वह ऑकती थी उसे उसके मोटे खद्दर के कुरते से और देषी चप्पल से । वह आत्मा और कला की पुजारिन नहीं, पर है टाई वालों की डारलिंग। इन्दु ने अपनी ऑख फेरकर जगदीष को देखा, जो बगल में थे, और खिल उठी संकेत मात्र से ।

भाषण अपने प्रवाह में चरम सीमा की ओर जा रहा था । श्रोता गंभीर थे । लोगों के ओंठों पर मुस्कान खेल रही थी । तब तक करतल–ध्वनि आरम्भ हो गयी । हाल गूँज उठा उस ध्वनि से ! स्नेहलता अपलक दृष्टि से देख रही थी इस अपरिचित वक्ता को ! उसका सुलभ व्यक्तित्व मानो कला के साथ उसके स्वच्छ हृदय में बैठा जा रहा था । वह भूल गई थी अपने को इस प्रवाह में । वह क्यों अकारण खिंची जा रही थी, वह इसे न जान पा रही थी । भाषण समाप्त हुआ । महेन्द्र ने मुस्करा दिया । उसके श्र मतम ुख को समीप देखकर इन्दु जल उठी । ''अरे ! यह तो वही महेन्द्र है, जो मेरी मदर के पास रहता है ।''

विपक्ष में बोलने के लिये नाम पुकारा गया स्नेहलता का, इस कालेज की ओर से । कितनी ऑखें उठीं–उसकी ओर । इन्दु इसे देखने लगी । आ गई षुभ्रवसना देवी–सी एक कुमारी प्लेट–फार्म पर । वही जोष, प्रवाह था इस वाणी में । षब्दों का सामंजस्य, वाणी का उतार–चढ़ाव, तर्कों के साथ विषय को लथेड़ना अनुपम था उस भाषण में । विषय की सुखियॉ कटी जा रही थीं कुमारी की वाणी से । उसकी उक्तियों ; संतोष–प्रद तर्क ने विस्मित कर दिया श्रोताओं को । कितने दिल भर आये, बरबस तालियॉ पिटने लगीं । वह बढ़ी जा रही थीं विषय के खिलाफ अपनी उक्तियों से । ऑखों में श्रद्धा उतर आई । निर्णायकगण मुग्ध थे । इन्दु जल रही थी स्नेहलता को देखकर । जगदीष बाबू भूल चुके थे अपने को

स्नेहलता के प्रवाह में । वे अपलक निर्निमेष दृष्टि से देख रहे थे उस सरल रूप माधुरी को । इन्दु रानी उस तन्मयता को देख रही थीं । दृष्टि बदलने में उन्होंने कई बार मन्द स्मित मुस्कान बिखेरी पर जगदीष की ऑखें बिक चुकी थीं स्नेहलता पर। भाषण खत्म होने जा रहा था, जगदीष के मुॅह से वाहवाही निकली । स्नेहलता ने डाल दिया बरबस अपनी घृणा की दृष्टि उस टाई वाले जगदीष पर । वह वहीं तिलमिला उठा ।..... डिवेट समाप्त हुआ । दिलों में धड़कन बढ़ गई । हार–जीत के भूत ऑखों के सामने फिरने लगे । सभी उत्सुक थे । चमक उठी रनिंग षील्ड हाल के मधुर प्रकाष में, ऑखें लर्जने लगीं, हृदय की गति बढ़ती गई । स्वर्ण पदक पुस्तकों के ऊपर झिलझिला रहा था । सब की ऑखें फैलीं थीं उन चमकती हुई वस्तुओं । स्नेहलता की ऑखों में महेन्द्र था और महेन्द्र निर्निमेष दृष्टि से देख रहा था परिचित 'इन्दु रानी' को, जो जगदीष के साथ हॅस रही थी । पर जगदीष गंभीर थे, उस गंभीरता में स्नेहलता बैठ रही थी, जो उन्हें देखना भी नहीं चाहती थी ।'

चष्मा हाथ में लिये सभापति खड़े हुये । लोगों का जी धक् हो गया । उनके मुख से सराहना हुई महेन्द्र की । दूसरे क्षण लोग दंग रह गये जब उसके हाथ में षील्ड चमक उठी । स्थानीय विद्यार्थी चुप हो गये। पर न जाने कहॉ से करतल–ध्वनि गूॅज हो उठी । महेन्द्र ने नम्रता से सब का अभिवादन किया । उसका प्रथम स्थान था भाषण में । सभी आष्चर्य में थे । स्नेहलता का हृदय न जाने क्यों हॅस पड़ा उस विजय पर ? दूसरे क्षण 'स्नेहलता' का नाम गूॅज उठा । वह नम्रता से झुक गई । पलकें ''काष ! सुधा, सुनती तो मैं अपने पापों को कहती ।''

मिस पंत खोई थीं अपनी मधुर–समृतियों में । सहसा अर्दली ने पुकारा ।

'हुजूर !'

'हॉ कौन ?' वे चौंककर बोलीं ।

''हुजूर, लोग मिलने आये हैं ।''

''कौन लोग हैं ?'' मानो वे भूल गई हैं कि आने वाले कौन हैं ?

'हुजूर ! मेहरोत्रा बाबू, गोयल साहब ; कौल साहब, मि0 षाह इत्यादि हैं ।''

वे चुप थीं । मानो जिह्वा में षक्ति नहीं कुछ उत्तर देने की ! पॉव भारी थे । ''अच्छा आई' उन्होंने सोचकर कहा ।

''अरे मिस पंत !''

''हॉ नमस्ते, गंभीर वाणी से उन्होंने अभिवादन किया । सबके ओठों पर फैली हुई मुस्कान छिप गई न जाने किस गंभीरता में ! सब अपलक देख रहे थे उन्हीं मिस पंत को । मानो वे थों नहीं ।

''उनका यह परिवर्त्तन !'' सब के हृदय में प्रष्न उठ रहा था । आज उस चन्चल ऑखों में नारी का अमूल्य नारीत्व छलक उठा था । उस नारीत्व में झेंप न थी, वरन् यों ही व्यक्तित्व की गंभीरता थी, और उसकी छापें थी ।

''आपको आजकल क्या हो गया ?'' मि0 मेहरोत्रा ने कहा ।''

''कुछ तो नहीं ।''

'फिर क्यों .... अ .... परिवर्त्तन आप में .... ''

'हॉ भाई, कुछ समझ में बात नहीं आती ।'

स्चमुच !' सभी ने बारी–बारी समर्थन किया ।

उन प्रष्नों के पीछे क्या विचार थे ? क्या इच्छा थी ? यही कि उनकी रानी फिर वही हो जाती । फिर साथ आ जाती पहलू में, मनोरंजन का साधन बन कर । उनका क्लब सूना था । उनकी नीचता बलवती होकर आज यहॉ तक खींच लाई थी, षिकार की खोज में । 'चीज छुटी जा रही थी ।''

''मैं स्वयं नहीं समझ पाती अपने को, मुझे अब अकेले ही अच्छा लगता है ।''

''वाह भाई, खूब ! ऐसा नहीं .... ।''

''हॉ, बात कुछ ऐसी ही है । पिछले दिनों में मेरे पास इन्दु आ गई थी, इसी के कारण मैं और कहीं न आ जा सकी । फिर अस्पताल के झंझट ..... ।''

'इन्दु !'

'हॉ, वही मेरी लड़की ।' मिस पंत स्वतंत्रता से कह गईं ।

उनकी जिह्वा किंचित् रूकी तक नहीं । कितनी निस्पृहता थी उस वाणी में ! उन्होंने आज कह दिया कब से छिपे हुये रहस्य को ! उसके खुलने की षंका से ही कभी वे बीमार–सी हो गई थीं पर आज वे हल्की हो गईं अपने को प्रकट करती हुई । अफसरों की हवाइयॉ उड़ गईं, नारी को वास्तविक रूप में देखकर ।

आज वह स्वयं कह रही हैं, इन्दु उनकी लड़की है । उसने मंजिल देखी है नारी जाति की ।

'बड़ी खुषी है इन्दु को सुनकर .... अच्छा .... '' मि0 गोयल ने कहा ।

'हॉ भाई .... ।' सभी ने समर्थन किया ।

'पर अब क्लब आप को आना होगा .... ।'

'नहीं, अब क्षमा कीजिये, मुझे .... मेरी .... ।'

'हम लोग वही हैं मिस पंत ! आज इसीलिये आये थे .... आप के बिना .... ।'

'पर मैंने जीवन का समझौता कर लिया है।' सब की पलकें उठी रहीं उनकी ओर । ओंठ नीचे–ऊपर फैले ही रह गये । 'क्या यह मिस पंत नहीं ?' यह प्रष्न उठ सकता था उनके बीच में । आज वह कितने छोटे–से उत्तरों में काट दे रही हैं उन लोगों के प्रभावों को ! आज उनकी ऑखों में अग्नि जल उठी है उन लोगों के खिलाफ । उनका हृदय चाहता है सब को छोड़कर कराहती हुई मानवता से गले मिलने । उनके ऑखों में कर्नल थे, जिनके लिये उन्होंने हत्या की 'सुधा' की । वही सुधा अमृत पाथेय है उस नारी–हृदय में । सामने तिलमिला रहे थे राह के रोड़े । सब चुप थे अपनी जगह पर उसी मिस पंत के सामने । आज उनमें वह सुलभ चंचलता नहीं जिसे लोग बहका ले जाते थे । उनमें वह कंपन नहीं जिससे वह ऑखें मूँद लेती थीं । उनमें वह मस्ती नहीं जहॉ वह हृदय खोल देती थीं । रूप के सामने, सम्मान के दामन को उचित आभूषण, पुरूष । उन्होंने उसे गले लगाया है, ... यही है उनके परिवर्त्तन का मूल ।

'क्षमा कीजियेगा, अन्य प्रकार की सेवाओं के लिये मैं प्रस्तुत हूँ ।' मिस पंत ने नम्रता से कहा । पर लोग चुप थे । हृदय पर मानो अर्गला लग गया था ।

'आज क्यों इतने खुष हो बेटा महेन्द्र ? अधिक सूत कात लिया है क्या ?'

'नहीं । उस 'उस एलोक्यूषन कान्टेस्ट ?' में मुझे ही षील्ड मिली है ।

'सचमुच !'

'हॉ ।' मेरा ही कालेज प्रथम था ।

'ऐसा क्यों नहीं कहते, कि तुम फर्स्ट रहे !' मिस पंत ने भर लिया तरूणाई की ओर गये हुये महेन्द्र को अपनी बॉहों में । उन्होंने उसके उन्नत ललाट को चूम लिया मातृ–भावना और लाड़ से ।

'पर .... ।'

पर क्या ? सेकेंड कौन हुआ ।

'वही कालेज ... और स्नेहलता ।'

'सचमुच !' मिस पंत ने ओंठ थिरक कर फैल गये किनारों की ओर ।

'हॉ, उसे स्वर्ण–पदक और पुस्तकें मिली है ।'

'सचमुच बेटा ! वह पर्णिमा बहन की विचित्र आदर्ष बाला है । वह किसी दिन मुख उज्जवल करेगी अपने कुटुम्ब का ।'

'हॉ, मैं भी आष्चर्य में था । वह षुद्ध खादी की साड़ी में थी । उसके पिता कप्तान हैं न ।'

'हूँ । अच्छा । इन्दु कैसी है ?'

'मैंने नमस्ते किया था, पर वह किसी के साथ थी । बोली नहीं ।' महेन्द्र ने उदासी में कहा ।

''यह भी मेरा पाप है महेन्द्र ! मैंने उसे अपने हाथों से .... ।'' वे अपने को रोककर बाहर चली गईं। महेन्द्र की ऑखों में वही 'इन्दु' पैठ गई थी । उसका अनुपम सौन्दर्य बरबस ऑखों के सामने खिंच रहा था । ष

●

'जीवन–पथ में छेड़ने वाले ! ओह ! आज वैरी बन गये हैं मुझे रानी कहने वाले ! ओंठ से ओंठ हटा कि वह चली षिकायत अफसरों में । मैं तब लेडी डाक्टर थी ; और अब भी हूँ । पर तब न मैं जिम्मेदार थी, न मेरे पास काम थे ; पर सब के ओंठों पर मेरी बड़ाई थी, चारों ओर वाहवाही थी । कितनी दावतें ! कितनी नजरें! आज मेरे खिलाफ बातें हो रही हैं ! कितनी ऍगुलियॉ उठ रही हैं । कितनी नजरें टेढ़ी हैं, क्योंकि आज उन ऑखों को षर्बती नहीं बना पाती, न उनके साथ रंगरेलियॉ कर पाती हूँ – ओह ! मनुष्य को पाप से छुट्टी नहीं । मैं कितनी दूर चली आई हूँ, पर सभी लोग हसरतें भर रहे हैं, फिर दुष्मन बन रहे हैं । कितना कठिन कर्त्तव्य है ! एक ओर कितना कोमल वासना–पथ, दूसरी ओर

एक कठिन एक सहज । अस्पताल में गरीबों को मैं अधिक भर्ती कर रही हूँ, इसलिए मेरे ऊपर रिपोर्ट हो रही है । कितना स्वार्थ–मय–पथ है ऊँचे अफसरों का कर्त्तव्य क्या है, उनका बस वे लोग चोगा ही पहने हैं पर षाम को दिन दहाड़े प्याला रक्षित हो जाता है । यदि कोई पिलाये न तो वही गैर जिम्मेदार है और है वही कान पकड़ कर निकाल देने लायक । काष ! कर्नल की पिस्तौल एक बार इन कुत्तों की ओर घूम जाती । पवित्र हो जाती फिजा सामने लरजी हुई ।''

'वाह ! पापी तेरी कमजोरी ! गरीब औरतें मर रही हैं घुल घुल कर स्त्री–सुलभ रोगों से, पर मैं खुले आम सेवा नहीं कर पाती । वाह रे समाज के जिम्मेदार ! तुम्हीं लोग उत्तरदायी हो देष के, समाज के ! एक दिन गरीबों की दुनिया प्रष्न कर बैठेगी तुम्हारे सामने।'' मिस पंत अस्पताल से अभी–अभी आकर अपने कमरे में सोच रही थीं। उन्होंने अतीत देखा है अपना, उस पर उनकी फैली हुई ऑखों में रक्त उतर आता है। हाथ मलने लगती है। वे वर्तमान में संघर्ष के साथ हैं। सामने भविष्य का टेढ़ा–मेढ़ा पथ है, जिस पर उन्हें जाना है।

'हुजूर तार !' डाकिया लिफाफा देकर चला गया । वे चौंक पड़ीं कैसा तार ? तार में षीघ्र इन्दु की मॉग है सौ रूपये की । यह क्या, होगा ? क्या उसे दषहरे की छुट्टी में कहीं जाना है। मिस पंत ने सोचा, किसका तार है ?' महेन्द्र ने आते ही पूछा ।

'इन्दु का । मिस पंत ने कहा ।

'क्या दषहरे की छुट्टी में इन्दु आ रही है यहॉ ?'

'मैं यही चाहती थी महेन्द्र पर उसने सौ रूपये मॉगे हैं, न जाने किस लिये !'

'सौ रूपये !' महेन्द्र सोचने लगा ।

'नहीं, इन्दू दषहरे में यहॉ आयेगी !' महेन्द्र ने ठुनक कर कहा ।

'पर वह आगरा जाने वाली थी.....।' इसके पहले उसका पत्र आया था। महेन्द्र शान्त था सामने। मिस पंत शोक में थीं। हृदय कह रहा था कि 'क्या मैं उसे रोक नहीं सकती ?' वह मेरी लड़की है। पर क्या सबूत; कितने दिनों तक वह रही मॉ के ऑचलों में ? किसने उसकी तोतली बोली सुनी है 'अम्मा' कहते हुये ? फिर तुमने शिक्षा दी है उसे कुछ बनने की। उसने सीख लिया है; अब वह तरूण है; वह स्वयं सोच रही है अपनी बात, उसके पैर स्वयं बढ़ रहे हैं इंगित पथ पर। तुम रोक नहीं सकती ! नहीं तो वह कुछ प्रश्न कर बैठेगी संसार के सामने, क्योंकि तुमने शिक्षा देते समय खोल दिया है अपनी बातों को। इसीसे तुम्हारी इतनी उन्नति हुई है, उसे तुमने बताया है। इसमें क्या आनन्द है ? उसके हृदय में बैठ गया है। अब तुम बोल नहीं सकतीं। मिस पंत पछाड़ खकर गिर पड़ीं वहीं शोफे पर। चमक उठीं दो लकीरें उनके गोरे ललाट पर ! महेन्द्र सामने देख रहा था उस विफलता को।

'तो इन्दू नहीं आयेगी दशहरे की छुट्टी में !' महेन्द्र ने दीर्घ निःश्वास लिया।

भन्न् ! भन्न !!

चर्खे की ध्वनि कितनी मधुर थी ! सम्पूर्ण वातावरण गूँज उठा था महेन्द्र के चलते हुये चर्खे से। पियुनियों के बाद पियुनियॉ जुड़ती जा रही थीं। वह कितना प्रसन्न था अपने दैनिक कार्य में। वह गुनगुना रहा था अपने पतले लम्बे–लम्बे

सूत तार को देखकर। वह तन्मय था। बाहर कमरे की दालान पर चालों की खिसखिसाहट हुई। किसी के अस्फुट स्वर कानों में बरस पड़े। उसने ऑखें पीछे फैलाई। सामने से गोरे पतले हाथ जुटे थे उसकी ओर। कॉपती सी मधुर ध्वनि आयी––'नमस्ते।'

'यही स्नेहलता है न ?' हॅसती हुई मिस पंत ने कहा।

'हॉ, महेन्द्र ने आश्चर्य में कहा। स्नेहलता की पलतें झुक गईं। गोरी लम्बी अॅगुली में उसने लपेट लिया अंचल के छोर का किनारा। 'तुम लोग बैठो, मैं आई।' मिस पंत चली गईं दूसरे कमरे में.....।''

महेन्द्र का चर्खा वैसे ही बन्द था। आमने–सामने मानव की एक अपरिचित जोड़ी बैठी थी। शायद उनका वह क्षणिक मिलन महान् परिचय बन गया हो। स्नेहलता की ऑखें कितनी चिपकी थीं महेन्द्र से ! वह महेन्द्र के पास बैठने आई है। वह आकर्षित हुई सात्विक–पथ पर। उसकी चितवन में सजीवता थी अपने पथ की। पर महेन्द्र केवल जानता है कि वह स्नेहलता है, कप्तान साहब की लड़की, इन्दू के साथ पढ़ने वाली। इसके ऊपर विजेता स्वर्ण–पदक की।

'मेरा सौभाग्य है आपसे मिलकर, वह सरमाती हुई बोली।

'नहीं, मेरा.....महेन्द्र ने कहा ! उसकी पलकें ऊपर उठ गईं, स्नेहलता सिहर उठीं। महेन्द्र के ओठों पर मुस्कान की एक रेखा खिंच गई।

'इन्दू कैसी है ?' महेन्द्र ने पूछा।

'अच्छी है।'

'वे यहॉ नहीं आयेंगी ?' महेन्द्र के ओंठ खुले रहे प्रश्न के साथ।

'शायद, वे यही कह रही थीं, मैं आपकी चर्चा कभी करती थीं.....।'

'तब.....?'

'पर वे कुछ कहती न थी, आप के बारे में। वे चुप रहती हैं यहॉ के सम्बन्ध में।' स्नेहलता की ऑखें फैल गईं महेन्द्र के उदास मुख पर। महेन्द्र की ऑखें हटकर अपने चर्खे के उज्जवल–सूत पिंड पर थीं। वे चुप थे देर तक ! स्नेहलता शायद, समझ रही थी उस उदासी को। पर वह थी उपासक, और थी उसके हृदय में कोमल भावनायें। वह रह–रह कर सिहर उठती थी। वह बड़ी देर तक महेन्द्र की लाइब्रेरी देखती रही और महेन्द्र के हाथ के बनाये हुये चित्रों पर उसकी ऑखें बरस रहीं थीं ! 'बंगाल के अकाल–चित्र; मरी हुई मॉ–स्तन से लिपटा हुआ एक हृदय ग्राही बालक का चित्र सबसे सुन्दर था उसके चित्रों में। मेज पर गॉधी जी की सर्वोत्तम पुस्तक 'टू दी स्टूडेन्ट' रक्खी थी ! दूसरी ओर पत्रिकाओं का एक ढेर, जिसमें महेन्द्र के लेख प्रकाशित थे। स्नेहलता को गुदगुदी आ रही थी, इन वस्तुओं को देख कर वह पृष्ठों को फेरती थी और भर–ऑखों से देख लेती थी सामने महेन्द्र को।

'बेटी !' सहसा मिस पंत ने पुकारा अपने कमरे से।

'आइये चलें ! स्नेहलता की पतली ऑखें फैली थीं महेन्द्र पर। वह साथ था उनके।

'तुम्हारी मुझे बहुत याद आती है स्नेहलता !' मिस पंत ने स्नेहलता के हाथों को चूमते हुये कहा। वह शर्मा गई, और खुरेदने लगी फर्श को अपनी कोमल अंगुलियों से।

'मुझे भी तो.....' स्नेहलता ने धीरे से कहा। महेन्द्र की ऑखें मानों चुप थीं। इस प्रश्न के उत्तर में।

'अच्छा वह जगदीश कौन है ? इन्दु को.....।'

'एडीशनल जज का लड़का.....।'

'क्या इन्दु ने अभी तक इसका साथ नहीं छोड़ा मैंने कप्तान साहब को कई पत्र दिये थे इसके लिये।' मिस पंत उदास थीं अपनी बातों के कहने में।

'वही जगदीश।' महेन्द्र ने ललाट पर रेखायें खींचते हुये कहा।

'हॉ वही है; इन्दु स्वयं कहती है, कि, मेरे रास्ते में किसी के बोलने तक का अधिकार नहीं। मुझे मालूम है अच्छा–बुरा और अपना पथ।' वह आपको सामने रखकर अपने पथ का उदाहरण देती है। क्यों ?'

'हॉ स्नेहलता; मैं तो हूँ दोषी।' दीर्घ निःश्वास लेकर मिस पंत चुप थीं।

'मैं देखूँगा जगदीश कौन है ? महेन्द्र ने तिलमिलाते हुये कहा। स्नेहलता उसकी ओर देख रही थी।

'महेन्द्र किसी की धरोहर है। वह कितना प्यारा और पूज्य है अपने क्षेत्र में। कल वह इन्टर पास कर लेगा। वह अब कितना तरूण है, क्या अब तक वह बच पाता यदि वह उनके बीच होता ? मिस पंत के सामने इसकी चिंता कब से रूपवती होकर खड़ी थी। उनका जीवन कितना सफल हो जाता यदि वे अपने हाथों से हाथ पीले करतीं इन्दु के और महेन्द्र कितना चाहता है इन्दु को। पर बेटी मॉ के लिये प्रश्न बन बैठी है। शायद वह कह न बैठे, कि तुम इसके बारे में कौन बोलने वाली हो ! तुम्हीं ने तो कहा है कि विवाह करना महा नीचता है। वह स्वयं उदाहरण थीं इसके लिये। काश मेरे पाप.....' मिस पंत इस अपार चिंता से सिहर उठीं। उनकी कटी हुई ॲगुली उनके सामने थी। उसके हृग सम्पुटों में बदली घिर आई थी। ऑखें बरसने वाली थीं। उन्होंने छिपा लिया उसे अपने अंचल में। सामने सुधा की तस्तीर देख रही थी उन्हें।

स्नेहलता पढ़ रही है तन्मयता से अपने कमरे में। सामने पुस्तक का पृष्ठ खुला है। यह गॉधी जी का लेख था। 'बहनों' पर। स्नेहलता उस विचारधारा में डूब चुकी थी। ऑखों के सामने विचार–विमर्श आदर्श बन रहा था उसी पर उसे चलना है। सहसा ऊॅची एड़ी के सैन्डिल को बल से कुचलती हुई इन्दु, उसके सामने आ गई। स्नेहलता को आश्चर्य था, आज इन्दु के आने से। आज बात क्या थी ? इन्दु उसके कमरे में क्यो ? 'क्या तुम सचमुच रूठी हो इन्दु उसके कन्धों को झकझोरती हुई बोली 'नहीं तो, तुम शायद.....।

'नहीं स्नेहलता, भूल जाओ उन बातों को; मैं एक बात कहने आई हूँ।

'वह क्या ?' स्नेहलता ने उत्सुकता से पूछा।

'मान जाना पर.....।' इन्दु ने कहा।

'बात क्या है ?

'वहॉ का संसार कितना सुन्दर है, जहॉ देखो वहॉ रूप की दुनिया, मीठे सपनों की बहार है; चलो एक दिन मेरे साथ–साथ स्नेहलता !'

''संसार और सुन्दर ! और आज जब मानव–जाति तड़प रही है दो दानों के लिये, नारियों की अमूल्य निधि लुट रही है, दो कौड़ियों पर। मानव, मानव का खून चूसने वाला है। ऊपर से सरकार का यह प्रचंड कोप। हिन्दू–मुसलमान एक–दूसरे के लिये खूँखार हैं। मानव तड़प रहा है बन्द अपनी झोपड़ी में। रोग मुख फैलाये बैठा है निगल जाने के लिये। दिन दहाड़े गोलियॉ चल रही हैं निहत्थों पर।.....इन्दु.....। जरा देखो तो इसे.....'

'फिर वही पागलपने की बातें; मैं फिर रूँठ जाऊँगी, इसके क्या मतलब ? हमें अपना काम देखना है।

'नही, क्षमा करना। एक दिन यही बलिदान प्रश्न के रूप में आयेंगे हमारे सामने। देश अपना इतिहास लिखेगा, तब हमें जमानत देनी होगी। एक दिन हमी लोगों से भारत बना है; दूसरों से नहीं। देश को कितनी बड़ी आशा है हम पर। शहीदों की टोलियॉ हमारे ही लिये निकल रही है, इन्दु !'

'जाओ भी, बेकार मत बको; ठोकरें खानीं पड़ेगी, सचमुच स्नेहलता ! तुम्हें जगदीश बाबू रोज पूछते हैं, तुम एक दिन उनके बॅगले पर चलती।

वे पी0 सी0 यस0 में आ गये हैं !'

'यही तो कुत्ते बनेंगे नौकरशाही के ! इन लोगों का पाप कहॉ जा रहा है, इसे मिस पंत से सुनो इन्दु। वे खूब सुनाती है।

'हॉ वे भी आनन्द के बाद सन्यासिन बनने जा रही हैं।' ओह ! उनका वह रूप, धन, सम्मान, कितना बढ़ जायेगा। एक दिन,.....इन्दु ने दीर्घ निःश्वास भरते हुए कहा।

कर्तव्य के आगे क्या सुख ? उसने अभी लेख पढ़ा है। फिर नारी के लिये। उसने उन पृष्ठों को रख दिया इन्दु के सामने।

'मैने बहुत पढ़ा है, इन बेकार की चीजों को।' उसने उसे एक तरफ डालते हुए कहा। मैं फिर कहती हूँ, स्नेहलता ! आओ चले कल पिकनिक पर जगदीश बाबू की कार में। प्रमोद भी साथ रहेंगे।

वे कौन है ?' उसने बीच में बात काटते हुये पूछा।

'इन्हें तुम नहीं जाती ? डी0 यस0 पी0 हो गये हैं यूनीवर्सिटी से निकलते–निकलते। उस दिन उनके ड्राइंग रूप में उनके भेंट हुई थी। वे देखने लायक हैं। आओ चलें कल; जगदीश बाबू ने प्रार्थना की है।

'नहीं क्षमा करना मुझे, मैं न.....।'

'तुम्हें बदा है बुड्ढे गॉधी के पीछे मरना; एक कप्तान की लड़की से इन लोगों से क्या सम्बन्ध ?' वह फटकारती हुई चली गई अपनी झिलमिला फ्राक फहराती हुई। स्नेहलता समझ न सकी उस क्रोध की प्रस्तावना को।

●

• 'बस, अब आगे नहीं।'

'नहीं ! मैदान के आखिरी छोर तक।'

'कहॉ ?'

'उस टीले पर' जगदीश ने कहा। इन्दु का दायॉ हाथ जगदीश के हाथ पर था। कार रोक दी गई। इन्दु दौड़कर चढ़ गई टीले के ऊपर। जगदीश नीचे से ही देख रहे थे। न जाने किसे।

'आइये ऊपर।'

'अभी आया, तब तक तुम टहलो ऊपर।'

जगदीश वहीं झुरमुट के आड़ में हो गये। इन्दु ऊपर गुनगुना रही थी खुले प्रकृति के ऑगन मे। वह लय के साथ झूम रही थी।

'चले पवन की चाल जग में।'

वह खड़ी–खड़ी दूर देखने लगी नीली क्षितिज रेखा पर। उस रेखा पर, वहॉ कितने जगदीश बाबू, प्रमोद बाबू, रमेश बाबुओं की चहल पहल थी। उनकी कार, कितनी अच्छी है ? उन्हें कपड़ा बहुत अच्छा लगता है। वे बड़े रूप वाले हैं, उन्हें बड़ी जगह मिलेगी। कितने विचारों का घटाटोप था।

'ऊॅहू ! कौन !'

'जगदीश बाबू के हाथ हैं ये, छोड़िये ! इन्दु हॅस पड़ी। पर उसके दोनों नेत्रों पर अंधकार है। वह अपनी हथेलियों से उन हाथों को सहलाकर पहचान रही थी। पर ये हाथ कुछ लम्बे थे। उनकी रिस्टवाच गोल थी, पर यह चौखुंटी है। ये हाथ कुछ कड़े हैं। शायद प्रमोद बाबू तो ! पर इतनी जल्दी कैसे !

'प्रमोद बाबू।'

'अब पहचान पाई।'

'ओह ! आप कब पहुॅच आये ?'

'मैं यही था पहले से ही।

जगदीश बाबू कहॉ हैं ?

'अभी आयें; प्रमोद ने कहा।'

'आप की टाई आज बहुत अच्छी लग रही है। इन्दु उसे हाथ में लेकर बोली।'

'तुम्हारे भी तो.....।'

संध्या होने वाली थी। शून्य हो चला था मैदान। पगडंडी पर धूल उड़ी। पंछियों के जोड़े उड़ चले पंख ढीला किये। अपने–अपने घोंसलों की ओर। आकाश शून्य हो चला। नीलिमा गहरी हो चली। इन्दु देख रही थी उन्मुक्त ऑखों से उस नीलिमा को प्रमोद की गोद में। यह था पिकनिक। यहीं इन्दु स्नेहलता को लाना चाहती थी किसी की गोद भरने के लिये ! जगदीश उदास से ऊपर आ रहे थे नीचे झुरमुट से। ''काश ! आज स्नेहलता आई होती !

'अरे इन्दु के.....।' प्रमोद ने कहा उसके गोरे गाल पर एक चिन्ह बनाकर।

'मैं यह नहीं कहता, पर वह भी एक चीज है यार।

'जाइये ! आप स्नेहलता के लिये' इन्दु मीठी मसलन सी लाल होकर बोली।

'नहीं, तुम रूठ गई अरे उसे फॉसना चाहिये।'

'अच्छा' सभी खिलखिला कर हॅस पड़े। इन्दु चार हाथों के बीच में थी। उसके कितने मीठे सपने हैं। वह भूली नहीं इसे।

●

उस पाप के मार्ग में मुझे इन्दु मिली थी। क्या स्नेहलता नहीं ? 'पर स्नेहलता तो बनाई गई है। अपने मॉ बाप से; शिक्षा से। क्या इन्दु पवित्र बालिका होकर न आई थी उनकी गोद में। आई थी। पर माता अपने को मॉ नहीं समझे थी। उसका व्यापार अमर हो जायेगा, खिली ही रहेंगी उसके मन की कलियॉ। इन्दु स्थान लेगी बुढ़ापे में उस नारी का। वह पथ इंगित करती रहेगी। इन्दु उस पर चलती रहेगी। यही था उस नारी का रंगीला स्वप्न इन्दु के प्रति। नारी ने स्वयं विष दे दिया बचपन में स्तन के दूध बदले। इसमें इन्दु का क्या दोष ? वह अपने पथ पर चल रही है, और चलेगी। अब चाहे मॉ गिड़गिड़ाती ही रहे दया करने के लिये। यदि वह रोकती है, तो वह प्रश्न कर बैठेगी उल्टे पुल्टे। वह पूछेगी, कि उसे कहॉ पाई है, वह कौन–सी अंगड़ाई थी। जिसमें इन्दु का सृजन हुआ था। मिस पंत के सामने वह चॉदनी रात याद आ गई मेडिकल कालेज के दालान में उन्होंने कितनी मीठी अंगड़ाई ली थी उसके बाहु–पोश में। अब वह प्रश्न क्या करें। उसमें मातृ–हृदय जागा पर पाप की चरम सीमा पर वे संभली पर सब खोकर। शायद दूसरा जन्म, यदि होता तो, वे किसी की मॉ हों या 'सुधा'–सी कर्नल की पत्नी।

मिस पंत आज बहुत उदास थीं। रात बहुत अधिक बीती जा रही थी; पर पलकों में नींद नहीं। हृदय में संग्राम है, उसकी कुछ हार–जीत नहीं। मि0 कर्नल कहॉ है, उन्हें पता नही चला। कहीं गोली चलती, या कोई राजनैतिक बंदी होता, तो वे सिहर उठती थीं, कि उनके कॉतिवादी मि0 कर्नल न हों।

''काश मेरे पापों का प्रायश्चित ही कोई बता देता।'' उनकी ऑखें प्रश्न लिये सुधा की तस्वीर पर अटकी थी। पर शान्ति रजनी में केवल नीरवता है। उनकी पलकें कभी भीग जाती निराशा से, पर महेन्द्र को देखकर भर जाता उनका हृदय आशा आलोक से। उनका हृदय आज घायल है। कब से खून टपक रहे हैं अतीत के उल्टे पृष्ठों पर। वे चुप–चाप लेटी थीं अपने शोफे पर। खुली हुई ऑखें वातायन से दूर अँधेरे में अनेक चित्र देख रही थीं। सहसा कमरे से चीख आई––

अम्मा !; मॉ !

मिस पंत चौंक उठीं। वे तन्द्रिल सी दौड़ पड़ी महेन्द्र के कमरे में। 'क्या है बेठा ? मिस पंत ने ले लिया अपने अंकों में महेन्द्र का सिर। उसकी सॉसे तेज चल रहीं थी। ललाट पर पसीने की चार–पॉच रेखायें चमक रही थी।

'क्या है ? महेन्द्र।'

'कुछ नहीं मैंने एक स्वप्न देखा है अभी। मैं उसी में चीख उठा।'

'क्या स्वप्न है ?'

'मनोहर उपत्यका है। कहीं कोमल झुरमुट है। कहीं लम्बे–लम्बे वृक्ष। सलोनी लतायें वृक्षों के गले में लिपटी थीं। अजब था उस लोक का स्वप्न।'

'हॉ तब।'

कितने झरने रहे थे। पक्षियॉ डालियों पर उन्मुक्त हृदय से चहक रही थीं। झरने के उस पार कुछ 'कानन–बालायें' गीत गा रही थीं। मैं देर तक देखता रहा उनकी क्रीड़ा। कोई आकाश में उड़ जाती, कोई वहीं अदृश्य हो जाती। मैं दौड़ पड़ा एक की ओर। उसकी झिलमिलाती हुई उत्तरीय मेरे हाथ में फहरा उठी। मैं बेतहाशा दौड़ता रहा। मेरे एक हाथ में मेरा तिरंगा झंडा था मैं उसे भी संभाल रहा था। मेरे पीछे स्नेहलता बेतहासा दौड़ रही है। 'रूकिये, रूकिये।' वह चिल्ला रही थी। मैंने पीछे देखा–मुझे क्रोध आ गया। मैंने डॉट दिया वहीं से। वह रो पड़ी फिर भी मेरे पीछे दौड़ रही थी। वनबला मेरे बाहु–पाश में थी। स्नेहलता दूर सर झुकाये खड़ी थी हाथ जोड़े। वह जोर मार रही थी भागने के लिय। मेरी ऑखें नीचे हुई, पीछे भयानक खड्ड था। मेरे प्राण सूख गये। उसने झटका दिया, मैं लड़खड़ा गया उस अन्ध खड्ड में। तब तक मेरा एक हाथ स्नेहा के हाथ में था, दूसरा आपके। मैं चिन्तित हो उठा अपने भयानक स्वप्न में।'

महेन्द्र चुप हो गया। हृदय में उठते हुये भाव बह चले। मिस पंत के सामने लाल–लाल, पीली–पीली कितनी गोल–गोल रेखायें खिंच गईं।

'ईश्वर तुम्हारी रक्षा करें। मेरा जीवन तुम्हारे लिये है।' उन्होंने महेन्द्र के व्यथित ललाट को चूम लिया। वे चुप थीं। बलवती आशा हृदय में एक होश बनकर निकल गई।

•

'क्या जगदीश बाबू का रूप कम है प्रमोद से ? स्नेहलता को झकझोरती हुई इन्दु ने पूँछा।

'यही तो अपना हृदय है और ऑखें है, जिसे कि अपने लोग, रूप वाले हृदय वाले; सम्मान वाले मालूम होते हैं। इसमें संदेह क्या ?''

'हूँ ! तब तो सभी रूप वाले हैं।'

'सचमुच सभी अपने के लिये रूप वाले हैं। नहीं तो संसार कैसे बनता। उन काली झोपड़ियों में भी वे नंगे, काले–काले पुरूष कितने रूप वाले हैं उनके लिये।'

'तुम्हारा दिमाग उन कालों के साथ है।'

'हॉ। साथ होने के लिये तैयार कर रही हूँ। ईश्वर जाने, पर हॉ ! मैं कहती हूँ रूप के साथ हृदय को देखना इन्दू !' स्नेहलता गंभीर थी।

''पर मैं जगदीश बाबू के हृदय में क्या देखूँ ? आह ! वे.....।'' इन्दु की शरबती ऑखों में घुल गये जगदीश क्षण भर के लिये।

'पर फिर भी उनका हृदय कुछ दूसरा हो सकता है।' स्नेहलता ने कहा।

'हॉ। जैसे महेन्द्र का' इन्दु ने उपेक्षा किया स्नेहलता पर।

'महेन्द्र का क्या ?.....। स्नेहलता ने गंभीरता से प्रश्न किया।

'यही कि कुछ ऐंसी हैं जो उन्हें भी चाहती हैं।

'भाग्य कहॉ ?.....' उसके होंठ खुले रहे।

तुमने कभी देखा नहीं स्नेहलता ! ओह ! जगदीश बाबू, डिप्टी हो गये इतनी ही उमर में।

'क्षमा करो इन्दु, जगदीश का नाम मैं नहीं सुनना चाहती।'

मुझे तो घृणा होती है, इन खद्दर धारियों से।

'चुप रहो इन्दु ! महेन्द्र किसी हृदय के हैं।' और जगदीश ?

'तुम जैसी के लिये।'

स्नेहलता गंभीर थी। इन्दु तिलमिला कर बाहर चली गई। कितने दिन बीत गये, पर स्नेहलता इन्दु से नहीं बोली। उसने कितना कटु कह दिया है उसके हृदय की प्रतिमा के प्रति। वह दिन रात भर पढ़ती रही। इन्दु बारीक जारजेट की साड़ी तथा रेशमी ब्लाउज में सजी हुई, सेन्डिल दबाती पुनः आई स्नेहलता के पास सम्पूर्ण कमरा महक उठा मन्द स्मित पाउडर, क्रीम, इनके सुगन्धि से। स्नेहलता ने ध्यान तक नहीं दिया उसकी ओर इन्दु ने सहसा फिर छेड़ा उसके पुस्तक को बंद कर। स्नेहलता झल्ला उठी आज जीवन में प्रथम बार, न जाने उसके हृदय में कितना दुख हुआ था उसकी बातों का। उसके स्थूल ललाट पर तीन रेखायें खिंच गईं। होंठ फड़क उठे। परन्तु वह फिर भी गंभीर थी।

'तुम्हें जगदीश बाबू ने बुलाया है, आओ चलें, स्नेहलता !' उसने कान के पास धीरे से कहा।'

'तुम्हारे जगदीश बाबू रूप वाले हैं, और तुम रूप वाली हो, मुझे छोड़ दो मेरी दुनिया में।

'अरे ! मैंने महेन्द्र को नहीं.....कहा है स्नेहा !

'मैं आगे बात नहीं करना चाहती।'

स्नेहलता सामने देख रही थी। इन्दु उसे झकझोर रही थी जगदीश के फंदे में लाने के लिये। उसकी ऑखों से चिनगारियॉ निकल रही थीं। उस पर इन्दु छींटें दे रही थी। वह जगदीश बाबू को महेन्द्र के सामने रखकर स्नेहा की ऑखों से तुलना कराना चाहती थी। पर आज स्नेहा की वाणी में फटकार थी। इन्दु भी गंभीर हो गई। उसने अपने को देखा वह गर्व से भर गई। 'चली है मरने.....।' इन्दु कहीं और.....न मिला देने वाला.....। 'स्नेहलता के कानों में विष घोल उठा। उसका मुख रक्त–वर्ण हो गया। वह देर तक देखती रही न जाने क्या––?'

'स्नेहलता क्यों नहीं आई ? इन्दु !' जगदीश बाबू अपलक दृष्टि से देखते हुये बोले।

इन्दु की बड़ी–बड़ी शर्बती ऑखें नाच गईं। शोफे पर हाथ पटकती हुई भी कुछ बोल न पाई पर उसकी पेशानी में बूँदे झलक उठीं। ऑखों में प्रश्न का उत्तर प्रगट हो गया। 'स्नेहलता क्यों.....?'

'बस'.....इन्दु, तिलमिला उठी। उसका नारीत्व खनक उठा प्रणय की तुषार रेखा, रूप पर बिकी हुई नारी क्या अब शंका करेगी ? नहीं। जगदीश प्रयत्न करेंगे अभी उसे अपने अंक में रखने के लिये, पर उन्हें अब दूसरी की चिन्ता है। 'काश स्नेहलता.....।' क्या उसकी जिव्हा वहीं उलट नहीं गई ऐसा कहते ? क्या कोई प्रश्न नहीं करेगा वह क्यों इतना बढ़ा जा रहा है ? नहीं, वह जज का लड़का है, डिप्टी हो गया। सबकी इच्छा होगी कहीं वे मिल जावे ! 'क्या इन्दु से स्नेहा का रूप लावण्य अधिक मीठा है ? उसने कई बार घृणा प्रकट की उस पर और जगदीश पर फिर भी ये पूछते हैं।' 'वह क्यों नहीं आई ?' इन्दु को यह वाक्य विष बाण की भॉति पार कर गया। 'स्नेहा कभी आप से बात करती तो और आप.....! वह कुछ समझती नहीं आपको !' उसकी वाणी में कडुवापन था। वह गंभीर थी।

'ऐसा न कहो, इन्दु ?' यदि वह आती तो.....।' जगदीश की पलकें कहीं टिक गईं। मस्तक घूम गया। कामुकता स्पष्ट झलक पड़ी उनके ललाट पर वही शीघ्र कालिमा बन कर उभर आई उनकें ओंठों पर। नारी अपने को छोड़ किसी को और देख नहीं सकती उसके बाहु–पाश में। 'वह क्या है ? वह स्वयं बार–बार देख रही थी।

'मैं कभी न आऊँगी यदि आपने फिर स्नेह.....नाम.....लिया !'

'अच्छा नहीं' क्षमा–जगदीश ने अपने को छिपाया। उसके ओठों पर मुस्कान फैल गई।

•

महेन्द्र अपने कमरे में उदास बैठा है। चर्खे में आधी प्युनी अभी शेष है। उसे बरबस कितनी स्मृतियों ने आज अपनी बाहुओं में घेर लिया। वह मॉ का सुलभ प्रेम आज ऑखें में ऑसू बन के ढलक रहा था। पितृ–प्रेम क्षण भर के लिये एक सोने की दुनियॉ बनाकर चला जाता था। परन्तु थी वह स्मृतियों की छाया ही। महेन्द्र इसे सोच रहा था कब से। मिस पंत

के अमूल्य और निःस्वार्थ प्रेम का मूल्य क्या होगा, इसे वह ऑक रहा था कब से। महेन्द्र अब पूर्ण तरूण है। अब उसके मन में कितने प्रश्न उठने लगे हैं। एक ओर राजनैतिक प्रश्न दूसरे अपने कितने प्रश्न। उन प्रश्नों में सबसे कोमल और कठिन प्रश्न था 'इन्दु' का। वह आज 'प्रश्न' बन रही है महेन्द्र के हृदय में। 'स्नेहलता' बार–बार इस प्रश्न का उत्तर बनती थी। पर उसके हृदय में महेन्द्र एक कोमल प्रश्न था। उसका हृदय किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुॅच रहा था। महेन्द्र झुॅझला रहा था अपने पर। वह बेचैन है अपने हृदय की गुत्थियों से। कमरे में अभी आलोक था। खिडकियॉ दोनों ओर खुली थीं। वह कुर्सी खींच कर बैठ गया उसी ओर देखते हुये। सूर्य अस्ताचल की डगर पर थे दूर के भरे बादल काले–काले धब्बे से मालूम हो रहे थे। महेन्द्र की ऑखें दूर क्षितिज रेखा पर टिकी थीं। वहॉ दो मूक और स्थावर वस्तुओं का मिलना था। पर सूनी थी वह दूर की रेखा। सामने इन्दु का अलक जाल फैल रहा था। वह धीरे–धीरे बढ़ी चली आ रही थी। उस अलक जाल में उसका वह मुख था। पर देखते ही देखते वह पीछे खिसकने लगी और जा मिली उस शून्य में। महेन्द्र की उन्मुक्त ऑखें थक गईं। उसने पलक घुमाया। सहसा एक ऑख से एक बूॅद न जाने कहॉ से टपक पड़ा। उसे याद आने लगा अपना उस दिन का देखा हुआ स्वप्न। क्या वह वनबाला इन्दु थी ? 'नहीं' 'मैं.....।'

सहसा किसी की पग ध्वनि हुई। ध्वनि के बाद एक पुकार आई जिसमें मॉ का वात्सल्य प्रेम था।

'बेटा !'

'जी महेन्द्र ने कहा। फिर उत्तर के साथ ही वह पहुॅच गया मिस पंत के पास। महेन्द्र अब कितना लम्बा था मिस पंत के कंधे से। उसकी कालेज की पढ़ाई समाप्त हो गई है। वह श्रद्धा और जिम्मेदारी के कारण महेन्द्र को अपनी ऑखों से दूर न कर पाई थी। मिस पंत ने आज दो बार नीचे से ऊपर महेन्द्र को देखा वह सिटपिटा गया वहीं क्षण भर के लिये। मिस पंत अब भी चाहती थीं कि महेन्द्र को अपनी गोदी में ले लें।

'बेटा ! तुम्हें देखकर हॉस्पिटल की तमाम थकान दूर हो जाती है।' उन्होंने महेन्द्र को सहलाते हुये कहा। महेन्द्र नीचे देख रहा था।

'यह कैसा पत्र है ?' उसने ऑखें उठाते हुये पूछा।

'उसका.....।'

'इन्दु का.....?

'नहीं, वह मुझे पत्र लिखेगी, शायद गालियॉ लिखे कभी, यह स्नेहा का पत्र है। पत्र लिये हुये वे सीधी अपने कमरे में धम से बैठ गईं शोफे पर। उनका चेहरा कुछ उतरा सा था। महेन्द्र उस असीम उदासी को देख रहा था।

'क्यों आप इतनी उदास हैं।

'क्या बताऊॅ महेन्द्र !.....वे आगे चुप हो गईं।

'क्या है ? आखिर मैं अब जवान हूॅ मॉ ! क्या किसी ने रिपोर्ट बढ़ाया है ?' उसका चेहरा रक्तमय हो गया। ऑखें गोल हो गईं।

'वे लोग रिपोर्ट किया करें, मैंने तो अपना पथ ही बदल दिया है, मैं अब घूमने ही वाली हूँ।' उसकी मुझे चिंता नहीं, हॉ यह पत्र लो पढ़ो महेन्द्र ! वे पत्र को देकर उदास हो गईं अपने मस्तक को थाम।

'इन्दु तो अच्छे से है न.....।' महेन्द्र लिफाफा से पत्र निकालते हुये बोल उठा। उसके प्रश्न में एक आशंका की भावना छिपी थी।

'हॉ वह अच्छी क्यों नहीं रहेगी।' वह मुझे जलाने के लिये है।

'हॉ अब तो इन्दु की पढ़ाई समाप्त हुई इस वर्ष कालेज की और अब तो.....।'

'हॉ पर वह तो मेरे हाथ में नहीं महेन्द्र; पत्र में उसी की ही बात है, उसने साफ शब्दों में कहा है, 'मैं अपनी बात चाहूँगी, और चलूँगी अपने से अपने पथ पर।'—पर महेन्द्र ! यह बीज मैंने बोया है, उसका फल न जाने कितना कड़वा होगा मुझे खाना है, वह तो मुझसे प्रश्न कर रही है।' मिस पंत का आगे गला रूँध गया अतीत की रेखायें सामने खिंच गईं।

पर इन्दु ऐसी नहीं।' महेन्द्र ने कहा।

'नहीं महेन्द्र वह बिगड़ गई; मेरी बहन पूर्णिमा से लड़ रही है अपनी स्वतंत्रता के लिये। स्नेहलता तो उसकी मानों शत्रु ही है।'

'बिगड़ गई ! और इन्दु' महेन्द्र ने आश्चर्य से कहा।

'हॉ; पत्र में है वह दो—दो बजे रात को लड़खड़ाती आती है न जाने कहॉ से।' 'वह खुले आम शराब पीती है जगदीश के साथ।'

'शराब ! शराब ! ओह ! इन्दु ! महेन्द्र की ऑखें गोल हो गईं। वह आश्चर्य से देखने लगा मिस पंत को।

'नहीं वह शराब न पीती होगी ! मैं कल जाऊँगा उन्हें यहॉ लाने; दूखूँगा जगदीश कौन है ?' उसके मुख पर तेज झलक रहा था।

'नहीं महेन्द्र ! बात सत्य होगी; मैं कितनी नीच हूँ तुम सोच नहीं सकते, मैंने उसे अपने हाथों से बिगाड़ा है, रूपया और स्वतंत्रता देकर। मैं पापिनी हूँ, मुझे दंड दो; महेन्द्र ! मिस पंत व्याकुल सी देखने लगी।

महेन्द्र हक्का—बक्का सा था। मिस पंत क्या कह रही हैं, उसके दिमाग में कल नहीं आ रही है। उसके हृदय में एक तूफान चल रहा था। 'तो सचमुच इन्दु ऐसी है ?' उसे बार—बार अविश्वास हो रहा था।

•

'एक ही बार और मिस पंत !'

क्या ?.....।

'वही विह्स्की का प्याला, एक भाव से होंठ पर एक मेरे जिलाधीश ने कहा।

'मैं आप लोगों का मुख नहीं देखना चाहती, फिर चले हैं जलाने इस शेष कंकाल को।'' मिस पंत का मुख लाल हो गया। नसें फूल आईं। नारीत्व जग पड़ा अब। मि0 मेहरोत्रा खान, गोयल, मित्तल सिटपिटा गये।

'पर हम लोगों ने कुछ नहीं किया आपके खिलाफ।'

मैं तो लात मारती हूँ ऐसी लेडी डाक्टर की जगह 'जहॉ सर्वस्व बेचने पर भी छुट्टी न मिले.....।' मिस पंत के हृदय में क्रान्ति बरस पड़ी। आंसू के स्थान पर खून उबल पड़ा अबला की ऑखों में। 'मि0 कर्नल की भरी पिस्तौल मिल जाती काश !' मैं तोड़ देती सीनों को, इन आये दिन मेरे पास आने वाले कुत्तों का। मेरी ठोकरों की कुछ लज्जा नहीं है क्या इन पर ?'

'पर आपका इतना क्रोध, हम लोगों पर !'

'हॉ मैं कितनी गिर रही थी आप के पापों में, आपको गोली मार देना चाहिए थी मुझे।'

'ऐसा क्यो ? वाह ! सब आश्चर्य से बोल उठे।

'हॉ मैं नीच, कुल्टा पतिता, वेश्या से भी नीच रूप की रानी थी आप लोगों की। मैंने विष बो लिया है, वे सभी वस्तुयें मेरे सामने काल सी खड़ी हैं, पर आह् ! मेरे जीवन का अंत नहीं !

'पर कुछ तो कहिये ! मि0 खान ने कहा।

'नीच, कुत्ते, तुम लोगों से छुट्टी नहीं जब तक मैं लेडी डाक्टर हूँ.....आगे वे न जाने क्या आवेश में कह गईं। उनकी कुर्सी पीछे घिर्रा उठी। और चली गई दूसरे कमरे में।'

'क्या है मॉ ?' महेन्द्र ने पूछा चर्खे से उठकर।

मिस पंत चुप थीं, उनके शरीर पर कंपन था।

'वही अफसर.....। क्षीण स्वर में उन्होंने कहा।'

'मेरी पिस्तौल कहॉ है ?' महेन्द्र पागल हो गया, आलमारी खड़बड़ा उठी !

'नहीं महेन्द्र ! मैं स्वयं उपाय करने जा रही हूँ।' उन्होंने महेन्द्र को बॉध लिया अपने बाहु–पाश में।

'अच्छा मैं उनसे बात करूँगा।' वह आवेश में बाहर गया, पर वहॉ से मोटरें अभी–अभी चली गईं। महेन्द्र के हृदय में खून खौल कर जम गया। वह न जाने कब फिर ठीक होगा।

मिस पंत खड़ी–खड़ी सोचने लगीं। उनकी पलकें उठीं ही रहीं–''यह मेरा छल था; मेरा पाप था, मैंने इन लोगों को पहले प्याला दिया, मैंने कहा था, कि बिना इसके मजा नहीं। मैंने ठुकराया था मातृ–हृदय को, गालियॉ दी, मैंने नारीत्व को ओह ! यही मेरे पापी हाथ थे। जब मैंने उन लोगों के होंठों पर सचमुच विह्स्की का प्याला रक्खा था, स्वयं पिया था। उधर की आई हुई अंगड़ाई, मैंने अपने अंक में ले ली थी।'' मिस पंत रो रही थीं, पर उनका हृदय आप ही आप कह रहा था उनसे।

'ओह मेरे पाप ! मेरा धोखा !' क्यों नहीं कर्नल की पिस्तौल ने मुझे वेध दिया। मैंने उनके साथ भी तो धोखा किया है। पर नहीं, उन्होंने कुछ दिया है, वही है मेरा अमृत–पाथेय।'' मिस पंत अपनी कटी हुई अँगुली को, देर तक देखती ही

रही, और चली गईं धीरे–धीरे अपने कमरे में। वे आज अपने को इतना एकाकी समझ रही थीं, कि उन्हें ध्यान न रहा, कि कर्नल की तरूण आत्मा महेन्द्र के रूप में, उसके साथ है। वही है उनका अमृत–पाथेय। इसीसे उन्हें संतोष होगा मातृत्व का। नारीत्व के लिये उन्हें साधना करना है। न जाने वह कब पूरी होगी, न जाने कर्नल मिलेंगे या नहीं।

यह थी उनके हृदय में रूलाने और हॅसाने वाली समस्या वे शान्त थीं। कितने रंग–बिरंगे चित्र सामने बन–बिगड़ जाते थे। किसी चित्र पर उनका हृदय कमल खिल जाता, कभी पलक–सम्पुटों के बीच से दो बूॅद टपक पड़ती थीं। विकराल थी आज उनकी मानसिक वीणा वाद्य सहसा पर्दे की चूड़ियॉ खनखना कर आपस में मिल गईं। महेन्द्र था उनके सामने। उनकी चिंता–रेखायें स्पष्ट उभरी थीं इसके मुख पर। लाल ओंठ सूखा था।

'क्यों उदास हो ! बेटा।'

'कुछ नहीं महेन्द्र ने कृतिम हॅसी के पुट से उत्तर दिया।

'मेरा महेन्द्र अब उन दिनों का महेन्द्र नहीं रहा।' मिस पंत ने उसे सहलाते हुये कहा।

'क्यों ?'

मिस पंत अब गंभीर हो गई। सचमुच अब उनकी चिंता साकार हो गई। वह सामने प्रश्न कर रहा है 'क्यों !'

'तुम अब जवान हो गये बेटा ! मैं अपने हाथों से तुम्हारा हाथ पीला करूॅगी। मुझे तुम्हें सौपना है, किसी के अंचलछोर में तुम्हारी यह खद्दर की धोती का छोर बांधना है। पर काश ! कहॉ होगी तुम्हारी छोरा पकड़ने वाली।

'महेन्द्र के होंठ मानों फड़कने ही वाले थे। उसने दबा लिया उसे।

'पर अभी तो.....इन्दु की शादी.....।'

'ओह ! इन्दु का नाम न लो महेन्द्र, नहीं मैं आत्म हत्या कर लूॅगी। उसकी वह कड़वी फटकार।' मिस पंत के स्थूल ललाट पर रेखायें खिंच गईं।

'आप को इतनी चिंता क्यों ?'

'चिन्ता महेन्द्र ? मैं स्वर्ग पा जाती, यदि मैं तुम्हारा हाथ इन्दु के हाथ से पीला कर पाती। पर ओह ! उसका वह पथ ?' वे आगे चुप थीं। महेन्द्र और चिंतित हो गया। वे क्या कह रही हैं, वह फिर से सुनना चाहता है, पर वे चुप थीं, महेन्द्र को देखकर।

बाहर खटाका हुआ, तॉगा रूका। मिस पंत के कान खड़े हो गये।

'अब कौन है ?'

'होगा कोई, मैं आपके साथ हूॅ।'

सहसा एड़ियॉ टपकटपाती हुई कोई झलमला उठी कमरे के दरवाजे पर। पर्दे की कड़ियॉ एक ओर सिकुड़ गईं उस नारी के वेग से।

'अरे ! इन्दु !' महेन्द्र ने आश्चर्य से कहा। मिस पंत आश्चर्य में पड़ गईं।

'इन्दु ?'

'बैठो इन्दु बड़ी खुशी हुई। तुम्हें आज अपने पास देखकर' मिस पंत ने प्रेम से कहा। उनके गोरे मुख पर वात्सल्य की धारा बह गई।

'महेन्द्र अपलक नयन से देख रहा था, अपनी आशा की नव प्रतिमा को।'

'पर मुझे यहॉ रूकना नहीं है।' इन्दु ने झटके से कहा।

'क्यों इन्दु ?' मिस पंत चिंतित हो गईं।

'मुझे आप से एक बात बतानी है।'

'क्या ?' मिस पंत की ऑखें गोल हो गईं आश्चर्य से। उनके होंठ तन गये।

'आपके पत्र जिस बारे में मेरे पास जाते थे, वह आपका विषय नहीं। मुझे मालूम है अपना रास्ता। मैं उसी पर चलूॅगी, उसमें आप.....नहीं।'

'तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए इन्दु।' मिस पंत ने कहा।'

'मैं रहेगा चाहिये' को कुछ नहीं समझती, मेरे दिमाग में जो आता है, मैं करती रहूॅगी।

महेन्द्र देख रहा था अपनी साकार प्रतिमा को। पर वह शायद अपने उपासक की ओर ध्यान भी नही देती है। वह रानी कब की बन गई है, एक ऐसे राजा की, जो दूसरे की प्रतिक्षा में है।

•

स्नेहलता का हाथ बहुत जल्द पीला करना है।' पूर्णिमा को एक उपयुक्त वर की चिंता हुई। उन खोजती हुई ऑखों में महेन्द्र एक सुयोग्य वर था।

'हॉ ! मुझे भी चिंता है।' कप्तान साहब का हृदय फूल गया। स्नेहलता किसी बहुत बड़े अफसर की पत्नी बनेगी। यह था अन्तर माता के विचारों में। मॉ पुत्री के लिये पति चाहती थी। पिता लड़की के लिये अफसर। पर हॉ ! स्नेहलता की शादी की चिंता बढ़ गई थी दोनों हृदयों में। फिर जहॉ वे लोग देख रहे हैं, इन्दु का दिन–दहाड़े इनक्लाब।

•

स्नेहलता अपने कमरे में उदास बैठी है। कमरे में कई कुर्सियॉ हैं। बीच में गोल टेबिल। उस पर 'संसार' का साप्ताहित अंक रक्खा है। वह अपने विचारों में भूली–भूली–सी है। उसकी ऑखें कुछ देख रही है। सहसा अंक के बीच उसकी ॲगुली उलझ–सी गई। सामने पृष्ठ खुल गया। अंक के ऊपर सुन्दर सैनिक–वेष में 'डा0 लक्ष्मी' का चित्र था। 'ओह ! यही थीं झॉसी रानी रेजिमेट की कैप्टन ! कितना अमूल्य व्यक्तित्व था उस नारी का। फिर भी उत्सर्ग किया आपने

आप को देख–बलि–वेदी पर। कितना पूज्य हैं वे लाखों नर–नारियों के हृदय में। यही है जीवन का वास्तवितक मूल्य महलों में कितनी रानियॉ, बेगमें, बाई लोग, नित्य मरती–जीती हैं पर अमर है देश–बलि पथ पर इस नारी का इतिहास। स्नेहलता के मानस में भावनायें रंग उठीं। अंक को उलटते ही उनकी ऑखें आकर्षित हो गईं एक लेख पर जहॉ मोटे–मोटे शब्दों में लिखा था 'नारी से'। उसके नीचे महेन्द्र का कोमल नाम था। स्नेहलता की ऑखें फैल गईं उस पर। हृदय उछल पड़ा। ऑखों में स्मृति ऑसू बनकर बैठ गई। उसकी कल्पना साकार हो गई। स्नेहलता बहुत दिनों से आतुर थी महेन्द्र का लेख पढ़ने के लिये। स्नेहलता खिल उठती थी, जब उसकी राजनैतिक–सेवा की सराहना पत्रों में निकलती थी। आज सहसा मिल गई हृदय की साकार प्रतिमा। लेख में एक जादू था। नारी का समूचा हृदय–पट खुला था लेख में। उसका आदर्श क्या है, लेख भरा था इसी भावना से। नारी पुरूष से किसी दशा में कम नहीं है, उसे पुरूष के हाथ में हाथ डाल बढ़ना है देश–बलि–पथ पर। वह कोमलांगी है, पर चिता–सी धधकती हुई वह साकार जौहर की निर्माता है।' किसी की प्रिय वाणी हंसिनी–सी प्रतीत हो रही थी स्नेहलता को मानों वह दमयंती सी डूब गई है उस मृदुल–भावना में।'

'वह मेहन्द्र का हृदय है। लेख वह अपने हाथ से लिखता है, पर हृदय–वीण उसमें स्वर अलापती है अपना।'

'ओह ! कितना सुन्दर है महेन्द्र !' उसने लेख चूमते हुये कहा। कितना महान् आदर्श है उसके कर्तव्य–पथ का। उसके पास अतुल धन होते हुए, मिस पंत का एकमात्र सहारा और हृदय होते हुये वह भी सूत कातती है। उसकी वह मोटी–मोटी धोतियॉ और कुर्ते। काश ! मैं न्योछावर हो जाती ! वह कितना खिल जाता है, आपने साधारण वस्त्रों में।

स्नेहलता का हृदय फूल आया। वह अपने विचारों की रानी बन चुकी है; और निर्माण कर लिया है किसी के कोमल हृदय में अपना नीड़। वह भी उसके साथ तिरंगा उठायेगी, गायेगी उन्मुक्त स्वर से स्वतंत्रता के गाने। क्या उसके पिता महेन्द्र से बढ़कर उसके लिये कोई वर खोजेंगे ? नहीं। उसके पास अतुल धन है, रूप है, सम्मान है, क्या नहीं है , महेन्द्र अवश्य आयेगा पिता जी की ऑखों में। स्नेहलता हवाई किले बॉध रही थी। वह कॉपते हुये आकाश को अपने बाहु–पाश में बॉध लेने के लिये प्रयत्न कर रही थी। क्या महेन्द्र के लिये भी आकाश कॉपता होगा ? जो भी रूप के आकर्षण से नहीं बच सका है यह वह जाने। स्नेहलता एकाकी हृदय की रानी बन बैठी थी। सहसा मॉ ने कहा–

'स्नेहा। !'

'जी।'

'सिनेमा चलना है, जल्दी से कपड़ा पहन लो; जज साहब के भी घर के सब लोग आ गये हैं।'

पूर्णिमा ने कहा।

'क्या जगदीश भी होगा वहॉ भला वह न हो।' स्नेहलता अपने मन में सोचने लगी।

'जल्दी कहो स्नेहा ! मॉ ने कहा। वह वहीं वैसे खड़ी थी।'

'मॉ ! इन्दु को ले जाइये, मैं घर ही पर रहूँगी।' स्नेहलता ने याचना–भरे स्वर में कहा। इस वाणी में एक निवेदन था, न कि ईर्ष्या अथवा जलन।

पूर्णिमा का मुख गंभीर था स्नेहा के बढ़ते हुये विचारों से। कितनी दूर थी, वह आज के वर्तमान वातावरण से। मॉ को चिंता हो गई। यह लड़की सुयोग्य वर न पा सकेगी, क्योंकि उसमें आज इन्दु की भॉति रहन–सहन नहीं है। इस बात को कप्तान साहब बार–बार पूर्णिमा से कहते थे। उनकी लड़की, और इतनी पढ़ी–लिखी, फिर भी गंवार–सी रह गई है अपने विचारों में। न टेनिस कोर्ट में जाना; न कहीं पिकनिक, न भड़कीली साड़ियॉ और न कुछ !' 'स्नेहलता गंवार–सी है।' वाह रे पिता की चिंता ! और उनकी चिंता का आधार ! तथा परखने की कसौटी ! स्नेहलता अमूल्य होगी या बिना मूल्य की, इसे वह स्वयं ऑकेगी।

पूर्णिमा समझाने लगी स्नेहलता को।

'तुम कप्तान की लड़की हो, वह भी इकलौती। तुम्हें अब कितने दिन रहना ही है मेरे पास।'––पर तुमने आज कितने दिन हो, गये सिनेमा तक नहीं देखा।'

'तब इससे क्या हुआ मॉ ?' स्नेहलता चिंता और कौतूहल से पूछने लगी।

'बेटा ! इसके लिये तुम्हारे पिंता बहुत चिंता में हैं। आज का वर ठुकरा देगा गंवार लड़की को; तुम कितनी विद्वान क्यों न हो। फिर भी तुम्हारी राजनैतिक–सेवा रूचि।' मॉ ने गंभरी होकर कहा। स्नेहलता अपनी ॲगुली को अपने अंचल–छोर से गूॅथ रही थी। उसकी सॉसें फूल–सी आई थीं। पलकें नीचे जमीन पर थीं, जहॉ वह इतिहास पढ़ रही थी आज के नव समाज का। उसे तो उसका सुयोग्य वर मिल ही गया है, उसका हृदय कह रहा था। पर वाणी पर ताले थे। वह मूर्तिवत खड़ी रही। बाहर सनसनाती हुई कार आकर रूक गई थी।

'तुम जल्दी तैयार हो' मॉ ने कहा और चल दिया।

वह भूली–सी अपने कमरे में आई। उसके मानस में चलते हुये चित्रों पर क्या कोई स्याही फेर सकता है ? वह चिंता में फॅस गई। सहसा मॉ की पद–ध्वनि हुई। उसने झपट कर अपनी धुली हुई खद्दर की साड़ी और जम्पर पहन लिया। बस क्षण भर में वह तैयार थी। मॉ की ऑखें उठी स्नेहलता की ओर; सहसा ऑखें झुॅझला उठी उसे देखकर। 'यही है तुम्हारे पास साड़ी ? फिर, और, बस ऐसे ही ? न मुख पर पाउडर, न स्नो न बालों में कंघी !' देखो तो जाकर इन्दु को; सिविल लाइन भर में उसकी तारीफ है।'

'मॉ ! आप भी वही मुझसे चाहती हैं ? यह मुझसे नहीं होगा।' स्नेहा ने कहा।

''अच्छा ! चलो तो सही, अजब सनक है तुम पर।''

बॅगले से बाहर निकलती हुई स्नेहलता पर जगदीश की ऑखें फैल गईं। उसने देखा अपार सौन्दर्य शान्त–पुट में और नारीत्व को शुभ्र अवगुंठन में। उसकी उन्मुक्त ऑखें; शरबती पुतलियॉ नजदीक से देखना चाहती थीं। उसके आवरण को खोल कर। वह चाहता था, कि स्नेहलता उसके ही कार पर बैठे। इन्दु उपेक्षा कर रही थी स्नेहलता पर।

'आओ ! इस कार पर स्नेहलता ! जगदीश ने कहा। इन्दु कार को पकड़े खड़ी थी। उसकी पलकें खड़ी हो गईं।

'हॉ जाओ स्नेहा। पूर्णिमा ने कहा।'

'नहीं, मैं अपनी ही कार पर.....। उस पर इन्दु.....।' वह कहती हुई घुस गई अपने कार में, मॉ के दामन के पास। जगदीश की ऑखें तिलमिला कर रह गईं। 'काश स्नेहा उसके कार पर चलती।' जगदीश ने सोचा अपने बायें इन्दु को देखकर।

'इन्दु परख रही थी उस हृदय के खिंचाव को और उस मानव भावना को। पर वह चुप थी अपने विश्वास पर।'

खेल आरम्भ हो गया। पॉचों मूर्तियॉ स्पेशल गेलरी में सुशोभित हैं जगदीश वहॉ भी पूर्णरूप से असफल रहा। इन्दु सट करके बैठी है जगदीश के पास। पर हॉ स्नेहलता समीप है। जिसकी ओर जगदीश की ऑखें झुकी हुई हैं क्षीण आलोक में भी।

'प्ले बड़ा रोमॉटिक है' जगदीश बाबू !' इन्दु ने उन्हें झकझोरते हुये कहा।

'हॉ, उन्होंने छोटा–सा उत्तर दिया। इन्दु बार–बार उन्हें आकर्षित करने का उद्योग कर रही थी। उस हृदय पर एक दूसरा 'चल–चित्र' हो रहा था। उसमें खेल का कथानक नहीं, वरन् वह स्वयं कथानक है। क्योंकि स्नेहलता आज समीप है।

'जरा चुप रहो इन्दु ! यही मॉ–वगैरह हैं।' जगदीश ने बरबस हाथ छुड़ाते हुये कहा। नारी झुँझला उठी। उसका नारीत्व घट गया। इसी के लिये वह बिकी थी। इन्टरवल हुआ। मधुर प्रकाश से भर गया हाल। चमक उठी अपने अवगुँठन में स्नेहलता। जगदीश बाबू सटते जा रहे थे उस प्रतिमा के समीप। पर वह थूक देना चाहती थी इस रूप पर। महेन्द्र मानो स्पप्न में भी उसके सामने है।

'ओह ! यदि स्नेहा एक बार बोलती.....।' उसका हृदय मसोस कर रह गया।

'पिक्चर कैसी थी ?' नम्रता से जगदीश ने पूछा।

'मुझे क्या मालूम।' एक लघु उत्तर आया। इस छोटे से उत्तर में एक संतोष की वाणी थी, जो शान्त–हृदय का रूपक था।

'स्नेहलता ! जगदीश बाबू क्या पूछ रहे हैं, 'तुम्हें ज्ञान नहीं ?' अभी–अभी तुमने इतनी लंबी शिक्षा पाई, फिर भी तुम्हारा यह अध्ययन ?' तुम्हें बोलना चाहिए जगदीश बाबू से।' पूर्णिमा ने कहा। इन्दु वही सुन रही थी। जगदीश बाबू का हृदय–कमल खिल रहा था। वह खीझ उठी थी। उसने घृणा से भी नहीं देखा जगदीश को।

'देहाती कहीं की !' कार पर बैठती हुई इन्दु ने कहा।

'नहीं, इन्दु। इसी ने गोल्ड–मेडल लिया है कालेज में, मुझे याद है। जगदीश की बात पर इन्दु खीझ सी उठी।

•

'स्नेहलता आज क्यों इतनी खुश है ? उसके ओंठ पर हॅसी खेल रही है। जबसे महेन्द्र आया है। वह क्यों इतनी सटी जा रही है महेन्द्र से। जगदीश बाबू से उसने कभी बात तक नहीं किया।' इन भावनाओं का घटाटोप था पूर्णिमा के मानस में।

'नमस्ते इन्दु रानी !' महेन्द्र ने कमरे में घुसते हुये कहा। वह अभी–अभी टेनिस कोर्ट से आई है, सुबह की गई हुई। महेन्द्र तब से प्रतीक्षा में था इन्दु के लिये।

'नमस्ते; आप हैं ?'

'जी, महेन्द्र के होंठ फैले ही रहे। इन्दु भर ऑख उसे देखी तक नहीं। उसकी ऑखें सामने थी रेक पर, जहॉ जगदीश की टाई लटक रही थी। 'वह कितनी अच्छी रात थी जब उसके बिखरे बालों को जगदीश बाबू के हाथों ने स्वयं बॉध दिया था इसी टाई से।' इन्दु ने भावना के साथ उठकर टाई को ले लिया अपने हाथों में। महेन्द्र वहीं देखता हुआ बैठा ही रहा। वह जैसे कितना अपरिचित हो, उसने अपनी मॉ तक को नहीं पूछा।

'किसकी टाई है ?' महेन्द्र ने बात करने की इच्छा से कहा !

'वैसे ही है, आप सन्यासी आदमी क्या रहियेगा; खद्दर को छोड़कर। यह हमी गरीबों के लिये है।' इन्दु बनाती हुई बोली।

उस वाणी में एक उपेक्षा थी, उपहास था महेन्द्र के सम्पर्ण व्यक्तित्व पर, जो उसके कदमों पर लोट रहा था। वाह रे मानव तेरी कमजोरी ! महेन्द्र उस रूप को देख रहा था, जिसके आवरण में एक महान पाप साकार रूप में अट्टहास कर रहा था। वह स्वयं झिझकता था इन्दु के आगे। सचमुच कितनी अंधी है जवानी। यह वह तेज मदिरा है, जिसे हाथ में लेते ही ऑखें बंद हो जाती हैं। शरीर में केवल कंपन ही शेष रह जाता हैं

'अच्छा। माफ करियेगा, मुझे एक प्राइवेट पत्र लिखना है।' इन्दु ने कहा।

'किसे इन्दु ?' उत्सुकता से उन्होंने पूछा।

'इससे आपसे मतलब नहीं.....।' इन्दु ने गंभीरता से कहा।

महेन्द्र का जी धक् हो गया। आशा कुमुदनी पर घोर तुषारपात् ! वह कॉप उठा। वह क्षमा चाहती है। बात करने से भी, मैं और वह पत्र ! महेन्द्र खड़ा हो गया उदास सा। तब तक सहसा उसे याद पड़ गया मिस पंत के पत्र का।

'यह क्या ?'

'मिस पंत का पत्र।' महेन्द्र ने कहा। पत्र लम्बा था। उसकी तबीयत न होती थी पढ़ने की। पर क्षण भर में उसकी ऑखें फैल गई लम्बे पृष्ट पर। उसे कुतूहल हो रहा था। फिर क्षण भर में उपहास की एक गहरी रेखा खिंच गई उसके रंगे होंठों पर। उसकी लम्बी–लम्बी ऑखें सरकती जाती थीं पत्र पर। ललाट पर सिकन आयी। खिंच गई रेखायें, एक, दो, तीन। ओठ फड़क उठे।

'कोई मेरी शिकायत करके क्या कर सकता है। मुझे परवाह नहीं है। किसी की। मुझसे जलने वाले जले ! मैं ऐसी ही रहूॅगी.....।' हॉ ! उनसे कह देना, अब ज्यादा शिक्षा न दें, नहीं तो मैं.....।' संसार के सामने। मैं अब कभी न जाऊॅगी कह दीजियेगा।

महेन्द्र सामने सन्न हो गया। उसे हिम्मत न हुई कुछ कहने कीं वह कुछ देर तक सुनता रहा इन्दु की फटकार।

'पर अब तुम्हारी पढ़ाई खत्म हो चुकी है, इन्दु ! तुम्हें अब वहॉ.....।'

मेरी पढ़ाई और मेरे जीवन से क्या सम्बन्ध, मुझे वहॉ अपना काम करना है और आने के लिये।' फटकारती हुई बोली।

'वहॉ से भी कर सकती हो ?' महेन्द्र ने कहा।

'वहॉ मेरा कौन है ? उस उजड़ी जगह पर.....?'

'कोई नहीं ?'

'हॉ, कोई नहीं' ! इन्दु ने जोर से कहा–महेन्द्र उदास होकर कमरे के बाहर चला गया, वह घूम–घूम कर देखता रहा, पर उसकी ऑखें उस टाई पर थी।

•

'आप घर जा रहे हैं ? महेन्द्र बाबू !'

'हॉ स्नेहलता !' महेन्द्र ने उदास होकर कहा।

'कैसे आपने कष्ट किया था ?' स्नेहलता महेन्द्र को अपलक देखती हुई बोली।

'इन्दु को आने.....। पर वह.....नहीं जायेगी कभी।' उनकी उदासी और बढ़ गई।

'मुझे आपने साथ ले चलिये महेन्द्र बाबू !' उसकी वाणी में मधुरता और याचना का पुट था।

'अच्छा स्नेहलता !'

'कब !.....अच्छा, जल्दी आइयेगा।' उसके दोनों हाथ जुट गये। ऑखें फैली ही रही। महेन्द्र का तांगा बहुत दूर निकल गया, वह वहीं भूली–सी देखती ही रही न जाने क्या शून्य में ! सहसा मॉ ने पीछे से कहा।

'यहॉ आओ स्नेहा !'

'क्या है मॉ ?' वह मॉ के पास शोफे पर बैठ गई। मॉ गंभीर थीं।

'तुम पढ़ी लिखी लड़की हो, तुम्हें कुछ शरम नहीं मुझसे कहने में।

'क्या मॉ ?' स्नेहलता ने कहा।

'यही, कि इन कोमल हाथों में मेंहदी लगे ?' स्नेहलता ढक गई लज्जा के आवरण से। यद्यपि वह इन्दु से कहीं आगे है शिक्षा में। उसकी उठी हुई पलकें बोझिल हो गईं और गड़ गई फर्श पर।

'बोल, बेटी ! मॉ ने उसके हाथें को मलते हुये कहा। वह अब भी चुप थी उसके आगे बरबस चित्र खिंचा जा रहा था महेन्द्र का।

'कप्तान साहब ने सोच लिया है जगदीश.....।' स्नेहलता ने अपने मॉ के मुख को पकड़ लिया। यह उसका आज पहला बालकपन था।

'वही तुम से राय लेनी है, स्नेहा।' हॅसती हुई मॉ ने कहा। स्नेहलता के प्राण सूख गये। धरती सामने घूम गई। खून का प्रवाह रूक गया क्षण भर के लिए ऑखें गोल हो गईं।।

'यह क्या मॉ ?' स्नेहलता की पलकें ऊपर उठीं। उसने गंभीरता से कहा।

'यही तुम्हारी राय !'

'मैं अपनी राय दूॅ !'

'हॉ।'

'पर स्वीकार करना पड़ेगा।' उत्तेजित होकर स्नेहलता ने पूछा। मैं आप आपके सामने स्नेहलता नहीं रही; मैं हूॅ भारत की एक कन्या रूप में। आज मैं धृष्टता करूॅगी अपने जीवन के लिये। क्षमा करना मॉ।'

'हॉ बोलो; बेटी ! मैं तुम्हें सुयोग्य वर के साथ भेजूॅगी जीवन–पथ पर।

स्नेहलता फूल सी गई प्रातः की कलियों सी। वह लिपट गई मॉ से।

'वही ! महेन्द्र !'

पूर्णिमा शांत हो गई अपनी भावना में।

•

एक प्याला और !'

'नहीं अब बस, इन्दु ने कहा।

'क्यों ?' जगदीश की शर्बती ऑखें पूछ रही थीं।

इन्दु के दोनों गुलाबी होंठ बन्द थे। अधरों के मिलन बिंदु पर एक मुस्कान की क्षीण रेखा थी।

उसने एक ऍगड़ाई ली। अधरों पर मादकता झलक पड़ी। वे खुलने जा रहे थे तब तक किसी ने चूम लिया उसे। प्याले के बाद मादकता आई थी। मादकता के बाद कंपन। कंपन के उपरान्त ऍगड़ाई। इसने जैसे मथ दिया हो उस गुलाबी शरीर को। छा गई थी दोनों पर असीम शिथिलता, वासना की अन्तिम सीढ़ी। जहॉ से प्रेम उदासी धारण करता है। सहसा इन्दु चौंक पड़ी।

जगदीश ने पूछा, और नहीं ?

'नहीं, इन्दु ने कहा।

'आज आपसे एक बात पूछनी है जगदीश बाबू !' इन्दु ने गंभीरता से पूछा।

पर आपको सच्ची बात कहनी होगी। 'आज पूछूॅ की कल !'

'आज पूछो रानी; और अभी, तुम्हारे अतिरिक्त संसार में मेरा कौन है ? तुम्हारे लिये नित्य आज है।'

जगदीश ने कहा।

उनका बाहु–पाश खुला था। लेटी थी। इन्दु शोफे पर। इन्दु की शर्बती ऑखें ऊपर खुली थी।

'पूछो इन्दु। क्या है आज ?' उसने उस मुख पर एक निशान बना दिया।

इन्दु शान्त थी। उसे न जाने आज क्या पूछना है।

वह कब से रानी बनी है, पर आज वह एक महान् प्रश्न करने वाली हैं आज वह रक्खेगी उनकी जिम्मेदारी उनके सामने। उसने बहुत दिन बिता दिये वैसे ही।

'पूछूँ जगदीश बाबू !'

'हॉ। हॉ।'

'आज तो यह गोद मेरी ही है न, कोई अन्य तो नहीं आ सकती ?'

'कोई अन्य।' जगदीश का सिर घूम गया। सारा नशा काफूर हो गया। ऑखों में उदासी छा गई। जिम्मेदारी स्वयं विकराल रूप में सामने आ गई।

'इन्दु; कब की है उसके साथ, शराबी, नहीं ! नहीं !! हॉ.....तब.....एक बिना नाम की.....पर नहीं.....उसे मैंने..... रानी कहा है.....पर स्नेहलता.....ओह ! उसका रूप.....मॉ, नाम.....मैं जज का लड़का कौन, क्या ?' जगदीश के मन में पाप–पुण्य की दुनिया बनने बिगड़ने लगी। 'हॉ नहीं' का अब प्रश्न आ गया। अभी उन्होंने 'कहा था 'तुम्हें छोड़ और मेरी कौन रानी होगी।' पर तब उसने प्रश्न नहीं किया था, उसने नित्य की भॉति कह दिया था। पर आज कॉप गया वासना का कुत्ता। अब हॉ, नहीं का प्रश्न कैसा ?'

'ओह ! जीवन भर इतनी बड़ी जिम्मेदारी !'

'हॉ हृदय ने कहा।

'पर अब उसमें क्या है ? बुद्धि ने कहा। मैंने नहीं सोचा था कि इन्दु प्रश्न बन बैठेगी उसके ही गोद में।

'क्यों शॉत हो गये जगदीश बाबू ?' इन्दु ने कहा। दोनों आमने–सामने गंभीर बैठे थे। अब अभी का छलकता हुआ प्याला नहीं था। अब विष का प्याला पीना है, जिसे प्रेमी ही पीता हैं कितना कॅपाने वाला था जीवन और जिम्मेदारी का महान प्रश्न। इसमें वासना की बू न थी, न होंठों पर उभरी हुई मादकता थी। अब वही इन्दु काल रूप सी भयानक लग रही है उस प्रवंचक और स्वार्थी के लिये।

'बोलिये जगदीश बाबू !' इन्दु ने झकझोरते हुए कहा।

'सोच लूँ इन्दु ?'

'सोच लूँ, ओह ! अभी सोचना है।' इन्दु की ऑखें चढ़ गईं। शॉत मुख रक्त वर्ण हो गया। ओंठ फड़क उठे। 'क्या अभी सोचना था ?'

'हॉ इन्दु।'

'क्या पहले नहीं सोचे थे ?'

अब इसका उत्तर क्या था। कमरे की फिजा अभी कैसी थी अब कैसी हो गई। इन्दु अपने प्रश्नों का उत्तर चाहती है। उसे स्वप्न में भी नहीं विश्वास था कि 'अभी उन्हें सोचना है'––

'क्या वे धोखा देंगे ? उसे अब भी विश्वास नही हो रहा था, पर हॉ शंका हो चली थी। जगदीश की विधियॉ बॅधी थी सामने। अब उनका हृदय चोर सा सिकुड़ गया था। साहस नहीं था एक शब्द भी बोलने का।

'तुम इन्दु, आज क्यों इतनी परेशान हो, देखा जायेगा।' जगदीश ने कहा।

वाह रे ! नवयुवक समाज और तेरी प्रवंचना। क्या तू अभी समय चाहता है शेष रक्त चूसने के लिये। तुमने तो ले ही लिया है उसकी सर्वस्व निधि। फिर कल के लिये और चाहता है।

'नहीं मुझे आज ही उत्तर चाहिए।'

'क्यों इन्दु ?'

'मुझे कुछ शंका मालूम हो रही है, जब आपको सोचना है, तब सोचने के बाद, 'नहीं अभी भी कह सकते हैं।'

यह धोखा ? वह फफक पड़ी। कॉप उठे जगदीश बाबू, जो सोच रहे हैं। इन्हें पहले सोचना था–'क्या आप धोखा दे सकते हैं ? आपको समझ कर मेरा हाथ पकड़ना था वाक्यों के साथ इन्दु उदीप्त होती जा रही थी। सामने कमजोर हृदय कॉप रहा था।

'क्षमा करो इन्दु ! आज तुम्हें क्या हो गया है ? मैं एक हफ्ते में इसका उत्तर दे दूँगा।' वह चली गयी आज चिंता से कॉप कर–

दुर्बल नारी हृदय ! रूप पर मरने वाली ! पर कितनी भयंकर !' जगदीश कॉप उठा। इन्दु का प्रश्न रूप बार–बार उसके सामने आ रहा था। जगदीश इन्दु को क्या उत्तर देगा ? उसे कभी ज्ञान नहीं था कि इन्दु के रूप के पीछे, पिकनिक, प्यालों, के बाद एक जिम्मेदारी छिपी है अवगुंठन में। इन्दु का मादक रूप सामने आ जा रहा था। उसकी इच्छा हो रही थी कि वह 'हॉ' कर ले, इन्दु उस पर कितना विश्वास करके क्या नहीं न्योछावर कर दिया है उस पर ?–पर जब सामने उज्जवल भविष्य और स्नेहा को देखता है, जो अभी नई है, तब उसका हृदय 'न' कहने चलता है।

'पुरानी और नई चीज ? ओह ! पतन !! घोर पाप !!! इसने क्या किया ? वही आत्मा पूँछेगी प्रेम करने वालों से।'

हॉ उसे नई बहू मिलेगी, नया रूप और माल मिलेगा, धनी, सम्मानित लोग मिलेंगे, यदि वह एक ही बार कह देगा कप्तान साहब से अपने विवाह के लिये। इस नई भावना के साथ वह घूम उठा और मुँह से बरबस निकल पड़ा। 'जाने दो इन्दु को।' 'न' कह दूँगा। पर उसका हृदय कॉप रहा। वह कमरे में चक्कर काट रहा था। मानस में हॉ, ना का प्रश्न चल रहा था। उसकी आत्मा धिक्कार रही थी उसके किये हुये पापों पर। उसे वे चॉदनी रातें, वे नदी के किनारे ऊँची–ऊँची पहाड़ियॉ बगीचे याद आ रहे थे जहॉ उसने अनेकों बार उसे अंक में लिये 'रानी' कहा था। वह घोर विश्वासघात करने जा रहा था एक नारी के साथ। उसे उत्तर देना है झटपट सातवें दिन।

•

'मि0 जगदीश !'

'जी।'

'आज का अपाइन्टमेंट हो गया है।' कप्तान साहब ने कहा, उसके कमरे में बैठते हुये। जगदीश सामने की कोच पर था। दोनों आदमी में बातचीत हो रही थी। दरवाजे का पर्दा एक ओर उठ गया। सामने जज साहब आ गये। आज सभी एक महान् प्रश्न हल कर देंगे। आज समाज बलि पर दो हत्यारे होंगे सामने की फिजा में कंपकपी छा गई थी।

'बेआ ! पोस्टिंग के पहले तुम स्नेहलता से अपने हाथ रंग लो जज साहब ने कहा। कितना बड़ा भाग्य है तुम्हारा उसे पाने में।'

सामने कप्तान साहब फूले न समाते थे। जगदीश की दशा अजीब हो रही थी।

'ठीक है न जगदीश बाबू ?

'जी हॉ।' उन्होंने कहा।

दोनों हॅस पड़े कमरे के बाहर जाते हुए। हो गया दो दिलों का सौदा। सौंप दी गई देवता वधू सी स्नेहलता एक राक्षस के हाथ। उसे जाना पड़ेगां वह नहीं, नहीं कर सकती। जगदीश झूम रहा था अपनी फिर एक स्वप्निल दुनियॉ देखकर। 'वह उसे फटकारती थी, कभी सामने से बात नहीं करती थी, अब आ गई मेरे हाथ में–'वाह मेरी 'स्नेहलता रानी !' आज सातवॉ दिन है मैं कह दूॅगा इन्दु से 'नहीं' वह क्या कर सकती है मैं डिप्टी कलक्टर हूॅ' अब।' सहसा पर्दे के आड़ में किसी की छाया दीख पड़ी शायद कोई सुन रहा था उसका उत्तर। उन्होंने झट से बाहर देखा तो कोई नहीं–वे कॉप उठे शायद इन्दु तो नहीं; उसने सुन न लिया हो 'मेरा अभी का उत्तर।'

•

'धड़ाक।'

दोनों किवाड़ के पल्ले दो ओर फैल गये। पर्दा न जाने कहॉ झटक उठा उस कमरे में घुसती हुई काल मूर्ति से।

'बोलो, इन्दु कहॉ है ? इन्दु ! इन्दु !!'

'मैं नहीं जानता' जगदीश ने कांपते हुये कहा।

'तुम जानते हो; मुझे खूब मालूम है; तुम्हें बताना होगा इन्दु को।' महेन्द्र ने फुफकारते हुये कहा।

'इन्दु आज आने वाली थी.....पर।'

'पर क्या ? तुम जानते हो उसे।'–कप्तान साहब तलाश कर रहे हैं उसे, कब से उसका पता नहीं।

'पता नहीं !'

जगदीश की ऑखें उलट गईं। नीचे से बिजली दौड़ गई ऊपर तक। शरीर में काटो तो रक्त नहीं। हृदय गति बन्द हो गई क्षण भर के लिये।

'अरे ! इन्दु !!.....कहॉ' उसके होंठ उठे ही रहे।

महेन्द्र के शरीर से ज्वाला निकल रही थी। उसमें आज कर्नल का खून खौल उठा। वह गया। भौंहें तन गई। अब क्या करें जगदीश को ? वह कांप रहा था, चोर सा महेन्द्र के सामने।

पर अब चाहे जो हो, इन्दु थी दूर न जाने किस पथ पर। अब वह जगदीश के पास नहीं। वह सामने से आवरण में छिप गई कहीं–जगदीश को काट डालने से भी वह मिलने को नहीं। महेन्द्र का क्रोध चिंता बन गया। उसके पैर भारी हो गये। वह वहीं शांत बैठ गया कोच पर। उसकी दृष्टि सामने टेबुल पर थी। जगदीष पकड़े हुये चोर की भांति सिकुड़े हुये किनारे पर बैठे था। पर एक पैड था, महेन्द्र वैसे ही देखने लगा। यह उसका ज्ञान नहीं कर रहा था पर वैसे बेचैनी में वह फरफरा रहा था। उसकी ऑखें और तर्क–ज्ञान तो खोज रहा था इन्दु को, जिसका हत्यारा सामने बैठा था। पैड सादा था पर सुन्दर था अब वह देखकर फरफराने लगा। अकस्मात उसकी अंगुलियां रूक गईं। एक पृष्ठ के बीच में। आंखें फैल गईं इस अधूरे लेख पर। वह था पत्र। ऊपर सम्बोधन था 'हृदय रानी।'

महेन्द्र आश्चर्य में पड़ गया। हृदय में कुतूहल हुआ। जगदीश के कान खड़े हो गये उस पर। पत्र के बीच में 'स्नेहा' का नाम था। वह इस सम्बोधन से अब पत्र लिख रहा था 'स्नेहलता' को। महेन्द्र कांप उठा। इस कंपन को लिये वह पूर्णिमा के पास चला।

''आप इतने उदास क्यों ? महेन्द्र बाबू !'' इन्दु अवश्य आवेगी स्नेहलता ने प्रेम और नम्रता से कहा।

'सचमुच।'

'जी'–स्नेहलता ने कहा। उसकी उन्मुक्त आंखें देख रही थी महेन्द्र की उदासी और विकलता के पीछे अपार–सौन्दर्य। उसे आश्चर्य हो रहा था, महेन्द्र पर। इनकी कितनी उच्च भावना हैं शुद्ध खादी का आभूषण और उमड़ते हुये आदर्शों से पूर्ण इनके लेख और भाषण। कितनी ममता ओर प्रेम है इन्दु के प्रति ! पर उसने तो कभी फूटी ऑखों भी नहीं देखा था। पर आह् प्रेम की यह क्षमता।

'क्या मैं आज इन्दु के प्यार के प्रश्न ? विकल और चिंतित महेन्द्र से पूँछू ? महेन्द्र की ऑखें उसी ओर ही थीं, पर हृदय न जाने कहॉ था। स्नेहलता अपने प्रेम को साकार देख रही थी।

'यदि इन्दु न मिली तो ?' महेन्द्र के मुख से वैसे ही निकल गया, यद्यपि वह स्वयं तर्क कर रहा था।

'तब तो बड़ी बुरी बात होगी; मिस पंत के इस परिवर्तन जीवन में भी न जाने क्या हो जायगा। 'स्नेहलता ने कहा।'

''मुझे जल्दी उन्हें खबर देना है।''

''अच्छा.....आज एक बात पूँछूँ महेन्द्र बाबू।'' स्नेहलता गंभीर हो गई। महेन्द्र उस गंभीरता में एक गंभीर प्रश्न देख रहा था।

'हॉ ! हॉ। पूछो स्नेहा।'

'वह चुप थी। उसकी पलकों में ऑसू छलक रहा था।

'क्या है, स्नेहा' महेन्द्र ने पीठ पर हाथ रखते हुये कहा। स्नेहा के सारे बदन में जैसे बिजली दौड़ गईं सनसना उठा उसका मानस भवन और हृदय, इस मृदुल–स्पर्श मात्र से।

'मेरे लिये जगदीश का नाम लिया जा रहा है। वह चिंतित थी अपनी वाणी में।

'हॉ स्नेहलता। मैंने भी अभी देखा है उसके पैड पर तुम्हारे नाम के पहले 'हृदय–रानी' लिखा था। उसने उदास होकर कहा।

'जगदीश आह परमात्मा। मेरे लिये 'रानी'। इन्दु भी तो उसकी रानी थी ?'

'महेन्द्र बाबू।'

'हॉ तब।'

''मुझे बचाइयेगा इस घोर पाप–क्षेत्र में; मेरी अन्तरात्मा में आप हैं।''

यह कहकर वह फफक पड़ी। और मुख छिपा लिया अपने अंचल में। वह अभी और कुछ कहना चाहती थी पर कंठ बॅध गये थे विचारों से, तूफान से। उसकी उठी हुई पलकें महेन्द्र के चिंतित मुख पर थीं।

मैं भी तो.....। पर.....। वह स्पष्ट कुछ कह न सका।

'पर क्या ?' हम आप एक बंधन में बॅधेंगे। क्या करेंगे मेरे पिता।

वह गम्भीर होकर बोली।

'ऐसा न सोचो स्नेहलता। मैं अब न जाने कहॉ जाऊॅ, न जाने मैं कहॉ रहूॅ, तुम्हारे पिता किसी अफसर के ही लड़के को चुनेंगे तुम्हारे लिये।'

'ऐसा नहीं होगा ?' स्नेहा ने कहा।

'तुम मजबूर हो जाओगी, जैसे.....चली गई न जाने कहॉ।'

'पर याद रखियेगा, मेरे.....महेन्द्र।

'अच्छा'.....कहता हुआ महेन्द्र चल पड़ा। उसकी उठी हुई ऑखें पीछे–पीछे याचना करती जा रही थीं।

'जल्दी आइयेगा।' उसने पुकार कर कहा। महेन्द्र खड़ा हो गया, न जाने क्यों ?

स्नेहलता फिर पास आ गई। पर वह चुप थी। उसका गला रूॅधा था। वह फिर कुछ कहना चाहती थी। पर कह न पा रही थी। पलकें गिर गईं और फूले हुये गालों पर से ढरक पड़े दो बूॅद। स्नेहलता उसे छिपाना चाहती थी अपने अंचल में। पर वहीं गिर पड़ा।

'टप्। टप्।'

•

शान्त रजनी में खिल रहा था दुग्ध फेनिल–सा यह उज्जवल महल। दूर से इसकी धौलता मोह लेती है यात्रियों को। क्षण भर के लिये मलय भी वहॉ विश्राम ले लेता है। यह है मिस पंत का, सार्वजनिक अस्पताल। लहराते हुये तिरंगे के

नीचे चमक रहा है पवित्र नाम ''सुधा मंदिर''। अब यही उनका साधना–गृह रहा, जहॉ वे पूजा करेंगी भूखी, घायल, रोग ग्रसित जनता की। इसी में उन्हें ईश्वर मिलेंगे। यही किसी का ताज महल हैं यह किसी घोर पाल के प्रायश्चित रूप में है। मिस पंत का जीवन आज एक शुद्ध सेविका के रूप में है। दूर–दूर की रोगिणी स्त्रियॉ; विधवायें, कुल ललनायें, स्वतंत्रता से इसमें दवा करा रही हैं। सब की दवा मुफ्त में होती है। विशेष घायलों और रोगियों के लिये अलग–अलग जनाने वार्ड और मर्दाने वार्ड बने हैं। यह है कलुषित जीवन की प्रतिक्रिया। कितने नीचे से कितने ऊपर। पर की सीमा पुण्य बन गयी।

यह था उनके जीवन भर में कमाये हुये धन का सदुपयोग। दूर देश में इस अस्पताल का शोर हो गया। देश के बड़े–बड़े लोग अपना–अपना आशीर्वाद भेजने लगे। अखबारों में इसके प्रति पृष्ठ रंग उठे। समाज में उपहास की नारी, त्यक्ता आज पूज्या हो गई। मिस पंत ने कर्नल का पथ अनुसरण किया हैं वे अस्त्र लेकर देश–सेवा करने गये हैं। ये सेवा से। कभी उनसे पथ पर भेंट हो जायेगी, बस यही था उनके शेष जीवन का अमृत पाथेय। उनकी दृष्टि कभी पेपर में वेसे 'सुधा' पर पड़े न कि मिस पंत पर, अतः अस्पताल का नाम था 'सुधा–मंदिर'।

डाक्टरों, नर्सों और कम्पाउन्डरों के अतिरिक्त मिस पंत स्वयं आठ घंटे ड्यूटी देती थीं। घायल और रोगी उन्हें देखकर क्षण भर के लिए अच्छे हो जाते थे। यह था प्रतिशोध जीवन का। अब उन्हें 'इन्दु' की चिंता नहीं है, यदि चिंता है तो केवल महेन्द्र की, जिसे देखकर उन्होंने इतने बड़े अस्पताल का निर्माण किया है। अब महेन्द्र दस–दस रोज के बाद मिस पंत के पास आता। उसे राजनैतिक कामों से एक मिनट की भी छुट्टी नहीं मिलती। मिस पंत का हृदय हरदम लगा रहता उस धरोहर पर, जो आजकल सरकार से लोहा लेने मातृ–पथ पर आया है। उसे आज तक कितनी थैलियॉ मिली इस अस्पताल के लिये वह संख्या नहीं कर सकता। भूखी नंगी जनता चंदे से भर देती महेन्द्र के हाथों को। बच्चे नर–नारियॉ खिल उठते थे इस अस्पताल के नाम को सुनकर।

सांयकाल का समय है। अस्पताल शांत है। रोगी और घायल अपने–अपने कमरे में चुप पड़े हैं। कमरों के सामने कम्पाउन्डर और नर्से बैठी हैं। मिस पंत थोड़ी देर हुई ड्यिूटी से अपने कमरे में आई हैं और आराम कर रही हैं। महेन्द्र पन्द्रह दिन के बाद आज उनके सामने बैठा है। मिस पंत की ऑखें ममता से भरी हैं। उनके होंठों पर शान्ति रेखायें खिंची हुई हैं। कभी–कभी उनकी दृष्टि महेन्द्र के साथ–साथ मि0 कर्नल और सुधा की तस्वीर की ओर मिल जाती थी। रह–रह के उनके होंठ फड़क उठते थे, और अधर–बिन्दु पर कोई चीज फैल कर बिखर जाती थी।

''कुशल से तो रहे महेन्द्र ?''

'हॉ कुशल से था, पर देश की हालत बहुत बिगड़ी जा रही है।'

'वह क्या महेन्द्र ?'

'यही, कुचली हुई जनता, ज्योंही सर उठाती है, उसके सर बन्दूक के निशाने बन रहे हैं।' यह बढ़ती हुई अराजकता.....देश की दरिद्रता, और अकाल का प्रलय.....।'

'अस्पताल का क्या हाल है मॉ ?' महेन्द्र ने पूछा।

'अस्पताल रोगियों से भरा है, अधिकतर रोगी भूख और महामारी के हैं। आजकल के आये रोगियों में खून ही नहीं है।

'हॉ देश की बहुत बुरी समस्या है; जहॉ मेरे कुछ वार्लटियरस काम कर रहे हैं वहॉ की और भयानक दशा है। शहर का शहर श्मशान हो रहा है। बच्चे ओर सतीत्व बिक रहा है। भूख–ज्वाला शान्ति करने के लिए। सरकार से प्रश्न करने पर गिरफ्तारी हो जाती है। अभी तक हमारे सौ आदमी तक गिरफ्तार हो गये, कई जगहों पर गोलियॉ भी चली हैं।'

'हॉ कल, और मिला कर मेरे अस्पताल में पचास के करीब घायल आये हैं।' मिस पंत ने कहा।

'मैं कुछ रूपयों के लिये आया हूँ मॉ। महेन्द्र शान्त हो गया ? उसकी ऑखों में अजीब ज्योति फैल रही थी।

'अच्छा बेटा जो मेरे रूपये हैं वह देश और जनता के ही लिये हैं।

मिस पंत ने कहा। उनका समूचा मुख मंडल ज्योतिर्मय था।

'हॉ एक बात महेन्द्र।'

'क्या ?'

'स्नेहलता के दो पत्र आये हैं तुम्हारे पास, और दो मेरे पास–'उसने याचना की है तुम्हारे दामन के लिये, पूर्णिमा भी तैयार है। पर कप्तान साहब जगदीश को ही बनाने जा रहे हैं।'

'वही जगदीश। ओह। तब महेन्द्र ने कहा।

'मैं लडूँगी स्नेहलता के लिये, काश ! वह मिल जाती तुम्हारे दामन के लिये। मैं, फूल जाती, बस सफल हो जाती मैं।'

'महेन्द्र चुप था, उसकी ऑखों में उस दिन का स्नेहलता का ऑसू भर आया था। जब उसने याचना के बाद टपका दी थी अपने अंचल में।

'तुम्हें तीन दिन के लिये यहॉ रहना है। महेन्द्र। मैं जा रही हूँ। स्नेहा के पास, उसका जीवन लोग नष्ट करने जा रहे हैं। उसने उसके लिये हाथ जोड़ा है।'

महेन्द्र के मुख पर मुस्कान की क्षीण रेखा होंठो पर फैल गई। ऑखें भर आईं उसकी ममता और आचार–विचार से। वह चुप था।

•

'मॉ। मुझे विष पिला दो; मैं.....जगदीश के साथ।'

गिड़गिड़ाती हुई स्नेहलता ने पूर्णिमा के अंचल में अपना मुख छिपा लिया वह छटपटाती रही अपने विचारों को लिये। पूर्णिमा की ऑखों में ऑसू भरा था। कप्तान की कल की बातें उसके सामने एक–एक करके आ रही हैं।

'जगदीश कितना अच्छा है, डिप्टी कलक्टर। जज का लड़का। वह तो स्टूडेंट लाइफ में कितना होता रहता है, वह पाप एक खेल था उनके लिये।'– कितनी ठाट से रहेगी स्नेहलता, डिप्टी की पत्नी बनकर। 'वह बेकार सा महेन्द्र। फिर भी

जो मिस पंत के पास रहता है। वह खद्दर पहनने वाला। जिसके कि आगे जेल है, डन्डों की मार है, यातनायें हैं, भला उसके साथ वे अपनी एकलौती लड़की सौपेंगे। कट जायेगी, उनकी नाक; बूड़ जायेगी स्नेहलता।'

मॉ हाथ मल रही थी। वह समझ रही थी स्नेहलता की आन्तरिक पीड़ा को। परन्तु वह क्या कर सकती है, उसने पति के सामने अपना प्रस्ताव रक्खा था पर वह कई बार फटकार दी गई हैं पिता ठेकेदार है लड़की की शादी के लिये वही सब कुछ है; वह स्वयं विवाह करता हैं समाज का डर पिता पर है, लड़की को वहॉ जाना है जहॉ पिता भेज देगा। पूर्णिमा बार–बार आश्वासन दे रही थीं, पर उसमें बल न था; थी उसमें मॉ की अलग ममता और स्नेहा।

'बेटी। बेटी।' बाहर से एक धीमी आवाज आई। स्नेहलता का जी धक् से हो गया न जाने किस भावी आशंका से।

'जाओ स्नेहा। तुम्हें बाबू जी बुला रहे हैं।'

'नहीं मॉ; मैं अकेले न जाऊॅगी बाबू जी के पास, तुम भी चलो।' स्नेहलता ने कहा। आज पुत्री का इतना डर पिता के प्रति।

•

'स्नेह। कल तुम्हें जगदीश बाबू के साथ पिकनिक पर जाना है।' पिता थपथपाते हुये बोले। क्या स्नेह था इस थपथपाने में ? स्नेहलता शायद जान रही हो। स्नेहलता की याचक ऑखें मॉ की ओर थी। पलकों के बीच ऑसुओं की एक सीधी लकीर थी। मॉ का कलेजा कॉप उठा 'पिकनिक से।

'क्या मैं कुछ कह सकती हूॅ ?' पूर्णिमा ने कहा।

'हॉ। हॉ।' कप्तान ने कहा।

'स्नेहा को मैं दस माह अपने गर्भ में रक्खे थी, मैं उसके रज, रज, कण, कण, से परिचित हूॅ, और मेरा स्नेह धुला है अणुओं के साथ, मैं न दूॅगी स्नेहा को जगदीश के हाथ, संसार में और लड़के नहीं ?' पूर्णिमा अपने विचारों में झूम उठी। कप्तान साहब सन्न हो गये। स्नेहलता सर नीचे किये थी।

'आखिर तुम्हारी क्या इच्छा है ? समाज में मेरी नाक कटाना चाहती हो ?'

'समाज क्या है ?' जानना चाहता हूॅ उस पापी समाज को, वह किस लोक में रहता है, उसे किसने बनाया है ? आह। वह हत्यारा।'

'मैं नहीं जानता, कप्तान साहब ने एक छोटा सा उत्तर दिया।

'फिर उसकी कैसी दुहाई ?

'आखिर तुम्हारी क्या इच्छा है पूर्णिमा ? कप्तान साहब तमतमाये हुये बोले।

'मेरी इच्छा है कि स्नेहा की शादी वहीं हो जहॉ उसका वर हर अर्थों में उसका सहयोग रखता हो; विवाह प्रेम का अस्थायी नाम है, और वह होता है हृदय में।

कप्तान साहब को उन तर्कों से क्रोध आ गया और वे तिलमिला उठे अपनी भावनाओं में।

'तुम्हें घर में रहना है सभी तुम्हारे विचार पर बॉध रहे हैं। मेरे सामने हैं वे तमाम बातें.....।'

'ये सब बातें मैं जानती हूॅ पर मेरी भी एक याचना है।' पूर्णिमा ने कहा।

'वही महेन्द्र ?' कप्तान साहब ने पूछा।

'हॉ।' पूर्णिमा ने कहा। वह हत्या करने के लिये कह रही थी। वह विष पसन्द करती है जगदीश के स्थान पर।' गंभीरता से पूर्णिमा बोली।

'वह भले ही मर जाय पर एक सत्याग्रही से मैं, उसका हाथ नहीं पीला होने दूॅगा।'

'नहीं एक बार आप फिर दूर तक सोच लें जगदीश और स्नेहा को, ऐसा नहीं कि जीवन भर पछताना पड़े।'

'मैंने सोच लिया है; जाओ उसे समझा दो.....। मैं उसे सोचूॅ या मिस पंत की, जिसका कि नाम इतना काला है। या जगदीश को; जिससे अच्छा वर कहीं मिल नहीं सकता।'

'पर आज वह मिस पंत, मिस पंत नहीं, देश के कोने–कोने से श्रद्धांजलियॉ आ रही हैं उनके अस्पताल के कारण; महेन्द्र जनता का पूज्य नेता बन चुका है।'

'पर मैं तो कप्तान हूॅ, मेरी लड़की, मैंने जहॉ सोचा है वहीं जायेगी।'

'कप्तान साहब ने तिलमिलाते हुये कहा। बाहर से किसी की आने की आहट हुई स्नेहलता की निर्मिमेष ऑखें उधर उठी। ऑखें फैल गईं हॅसकर, मिस पंत को देखते ही।

सांयकाल का समय है। लान में कुर्सियॉ पड़ी हैं। बीच में टेबुल है उस पर पानी से भरा एक शीशे का गिलास है। खिन्न से कप्तान साहब एक ओर बैठे हैं। दूसरी ओर मिस पंत और पूर्णिमा बैठी हैं।

'हॉ तो मैंने तय कर लिया है। स्नेहा की शादी जगदीश के साथ।' कप्तान साहब ने कहा।

'हॉ सो तो ठीक है पर.....।' आगे के लिये। मिस पंत पूर्णिमा की ओर देखने लगी।

'स्नेहा का कोमल हाथ महेन्द्र से रंगा जाय।' गम्भीरता और विनय से उन्होंने कहा।

'यह नहीं हो सकता, मैंने बहुत सोच लिया है।'

'उसी के साथ एक बात और सोच लीजिये।'

'वह क्या ?'

'यही जो सोचने का विषय है।

'आखिर।' कप्तान साहब ने कहा।

'स्नेहलता की आत्मा और आदर्श।'

'मैंने सोच लिया है, मैं एक बैरागी और सत्याग्रही के हाथ स्नेहा को नहीं दे सकता, चाहे वह मर क्यों न जाय; आप लोगों की राय मैं मानने वाला नहीं !'

पति के सामने पत्नी की हार हुई। मिस पंत अब भी याचना करेंगी।

'आप दो आत्माओं को बॉधने जा रहे हैं जरा तौल लीजिये उस प्रणय फास को। 'ओह। जगदीश जिसने उजाड़ दी मेरी इन्दु की दुनिया।

मिस पंत की ऑखें भर आईं।

'पर माफ कीजियेगा वह आप की छाप थी, और थी नसीहत आपकी, जिससे इन्दु उस पथ पर गई, इसमें जगदीश का क्या दोष ?'

मिस पंत की ऑखें स्थिर हो गईं। पृथ्वी घूमने लगी। अंधेरा छा गया इस वाणी के चोट से। कप्तान की यह भावना जगदीश के प्रति उन्हें पागल कर दिया।

भूली हुई इन्दु फिर सामने आ गई रूलाने।

'सचमुच वे मेरे पाप हैं, और मैंने उसे सचमुच बिगाड़ा, मैं स्वयं उस समय बिगड़ चुकी थी, यह बिगड़ना ही मुझे बनना मालूम हो रहा था, परन्तु ईश्वर ने मुझे संभाला, मैं प्रार्थना करती हूॅ 'स्नेहा' के जीवन के लिये और कुछ नहीं।'

'तो आपकी इच्छा क्या है ?'

'मैं अन्तिम बार कहती हूॅ।' मैं स्वीकार करती हूॅ, मैं पतिता हूॅ, पापी हूॅ, क्षुद्र हृदय हूॅ मैंने इसी के प्रायश्चित में सेवा–पथ अपनाया है– पर.....मेरी आत्मा अभी रो रही है,.....मैं यदि देख लेती स्नेहा और महेन्द्र को आपस में बॅधे हुए एक प्रणयसूत्र में। यद्यपि वे बंध चुके हैं, पर आप जो चाहें.....बस।'

'यही मेरी भी इच्छा है, कप्तान साहब।' पूर्णिमा ने समर्थन किया।

'नहीं मुझे नारियों पर विश्वास नहीं, मैं स्वयं चलूॅगा' कप्तान साहब ऐंठने हुये बगल की ओर चले गये।

'एक बात कप्तान साहब।' दौड़ती हुई मिस पंत ने कहा।

'कुछ नहीं, आज तुम मुझे रास्ता दिखाने चली हो, मैं तुम्हें सबसे नीच समझता हूॅ, तुम्हारे पास स्नेहा।' ओह। कभी नहीं।'

मिस पन्त की भरी हुई ऑखें स्नेहा की भीख मॉग रही थीं। कप्तान साहब तमतमा उठे थे। उन्होंने अपने पथ से झटक दिया गिड़गिड़ाती हुई मिस पंत को। वे वहीं शोफे पर रो पड़ी। दौड़ती हुई स्नेहलता, उन अमूल्य ऑसुओं को संचित करने लगी। चारों ऑखों से अविरल धारा फूट निकली। वहीं मॉ बाप खड़े ही रहे। नीचे दोनों का अंचल भीग उठा।

'माफ करना स्नेहा। तुम मेरे पापों से जगदीश के हाथ जा रही हो।

'आह।' वह चीख पड़ी वहीं उनकी गोद में। उनकी कोमल हथेलियॉ सहला रही थी स्नेहा को।

•

'यह आल इन्डिया रेडियो स्टेशन देलही है।' रेडियो से एक गरजती हुई आवाज आई। मिस पन्त और महेन्द्र चुप थे। 'देखो आज की क्या खबर है, महेन्द्र ने कहा अपना हृदय दबा कर कहा।

'बाम्बे की बैठक में सभी नेता गिरफ्तार हो गये।' एक गूँजती हुई आवाज आई महेन्द्र की ऑखें गोल हो गई। हृदय धक् हो गया। बदल गई फिजा उसके सामने। वह भय से कॉप उठा। मिस पन्त चीख उठी।

अब क्या होगा महेन्द्र। यह तूफान सी खबर सुबह देष के कोने–कोने में आग सी फैल जायेगी..... तब..... ।' उनके होंठ तने रहे। ऑखें फैली थीं। भय से कॉपते हुये महेन्द्र के मुख पर।

'आह ! गजब हो गया, सुबह न जाने क्या हो जायेगा। कौन भूखी जनता को रोकेगा, गोलियों के आगे से।

'वह यह भय और आश्चर्य का समय नहीं रहा महेन्द्र। अब तुम्हें बचाना है सारी जनता को, नेताओं की अनुपस्थित में।' मिस पन्त ने कहा।

'हॉ प्रयन्त तो यही करूँगा।' उसने लम्बी सॉस भरते हुये कहा।

'हॉ महेन्द्र यही अमूल्य कर्तव्य है, यही आशा है देश की और नेताओं की तुम ऐसे नौजवानों से; यदि कहीं गोली चली तो मैं देख लूँगी अपने अस्पताल में; पर बचाना भूखी, नंगी जनता को इस लपट से। महेन्द्र ने इसे गम्भीरता से सुना।

•

गूँज उठा सम्पूर्ण शहर इनक्लाबी नारों से। थर्रा उठी पृथ्वी बढ़ती हुई जनता से सिहर उठी फिजा सामने। कॉप उठा महेन्द्र इस जुलूस से।

'रूको। रूको।।' जुलूस के आगे जनता की बाढ़ को महेन्द्र अकेला रोक रहा है।' वही कर्नल का धरोहर और मिस पन्त का अमृत–पाथेय। कितना अमूल्य है इसका जीवन। कितनी आशाओं का यह राजा है। जुलूस के साथ–साथ दोनों किनारों से आर्म–पुलिस चल रही हैं अगले चौराहे पर सिपाही खड़े हैं महेन्द्र के सामने हत्या और खून नाच रहा है। वह कॉप रहा था।

'रूको ! रूको !! सावधानी से काम लो !!!'

पर कौन सुन रहा है, आज अपने लीडर को। सैकड़ों मुट्ठियॉ ऊपर उठ गईं आकाश की ओर इनक्लाबी नारों के साथ।'

'बढ़ो, आगे बढ़ो।'

महेन्द्र के सामने अब खून का नजारा सामने दीखने लगा। जनता बढ़ चली। महेन्द्र लाचार हो गया। मार्चिंग सांगत से गूँज उठा सारा आकाश मंडल। चौराहे पर जुलूस का सिरा आ गया। गरजती हुई एक आवाज आई।

'आगे नहीं बढ़ सकते।' महेन्द्र के सामने एक खौफनाक आकृति आकर तन गई।

'नहीं, रूकेंगे।' लाखों मुट्ठियॉ बँधी हुई फिर आकाश की ओर उठ गईं। महेन्द्र सबसे विवश हो गया। वह चुप था जनता बढ़ने लगी। सहसा एक गरजती हुई आवाज आई।

'लाठी चार्ज।'

बढ़ते हुए सिपाही टूट पड़े। चलने लगी खट–खट लाठियॉ, नंगे बदन और खुले हुये माथों पर। जुलूस गोल हो गया महेन्द्र के सर एक लाठी गिरी। वह सन्न हो गया। क्षण भर में गिर पड़ी कितनी लाशें छटपटाती हुई। महेन्द्र अब भी दौड़ रहा था इधर–उधर शान्ति के लिये। तब तक बॅधी हुई एक लाठी का बहुत तगड़ा ठनाका हुआ उसके घायल सर पर। ऑखों के सामने ऍधेरा हो गया। शरीर कॉप उठा। वह वहीं गिर पड़ा। उसकी ऑखें टिक गईं सामने एक पंचतल्ले कोठे के कमरे में।

वह कमरा खुला था। किसी युवती 'की ऑखे' उस पर थीं।

आगे ऑखे बन्द हो गईं। उसे पता नहीं वह कहॉ था।

•

'मैं कहॉ स्नेहा हूॅ ? मॉ। मॉ।'

'चुप रहिये' युवती ने कोमल हाथों के स्पर्श से कहा।

'क्यों ?' लड़खड़ाती हुई फिर एक वाणी आई।

'डाक्टर ने बताया है; आपको गहरी चोट लग गई है।''

यह कितना मधुर स्वर था। घायल क्षण भर के लिये अपनी पीड़ा भूल गया। उसने अपना हाथ ऊपर बढ़ाया। सर पर मोटी पट्टियॉ बॅधी हैं। आज ठीक 11 घन्टे के बाद उसने ऑख खोली है। कितना सजा हुआ कमरा था, महेन्द्र अपने को भूल गया। उसकी लड़खड़ाती हुई चेतना सराबोर हो गई मधुर भाव सें वह अपनी बेहोशी से कुछ चेतना में था।

मैं कहॉ हूॅ ?'

'चुप रहिये।' चिक के आड़ से वही मधुर वाणी फिर आई। ''इनकी व्याकुलता शायद बढ़ गई है, युवती के हृदय में यह बात आई।

'तुम मेरे पास.....।' उसने फिर कहा।

सहसा वीणा झनझना उठी। वह करवट बदल रहा था। एक अलौकिक संगीत की मृदु लहरियॉ बरबस उसके हुदय में शक्ति, स्फूर्ति भरने लगी। हृदय भर गया। झन्कार के कम्पन से। सहसा तबले पर गुटके फिरे। पायलों का मृदु–रव घूघरों की ताल में वह बह गया। उसके कान खड़े हो गये।

अरे ! मैं किसके घर में हूॅ ?' उसने स्वयं प्रश्न किया। महेन्द्र उठ बैठा। और उतर गया वहीं सीढ़ियों पर। वह भूली ही रही अपली अलौकिक कला मे।

•

'यह लो जारजट की साड़ियॉ और रेशमी ब्लाउज।'

जगदीश डिप्टी साहब, ने कपड़ों का एक पुलिन्दा सामने रख दिया और देखने लगे निर्निमेष दृष्टि से स्नेहलता अपनी रानी को।

'क्या होली मनाने के लिये ? उसके होंठ कॉप उठे।

'नहीं पहिनने के लिये।'

'विदेशाी वस्त्रों की होली मनाई जायेगी। मेरे महिनने के लिये खादी की पवित्र साड़ियॉ हैं।' स्नेहलता की भौहें तन गई। किनारे पर कुछ फड़कन थी।

'पर मेरी नाक कटी जा रही है, पहिनना होगा आज इसमें से एक।

'इसे न छीनों, मेरे सर्वस्व.....।' स्नेहलता के आगे स्वर के न जाने किस वेदना से दब गये। पलकों में ऑसू आ गये। डिप्टी साहब बड़बड़ा रहे थे अपने ताव में। वह चुप थी। अपनी भावनाओं में। सहासा नेत्र से ऑसू उद्वेलित हो गये, जो उसके नेत्र के नीचे एक काले–काले धब्बों से होकर नीचे–नीच टपक पड़े। विवाह के उपरान्त उस लाचार को यही ऑखों के नीचे काले काले धब्बे मिले हैं अपने गोरे मुख पर। वह इसी को देखकर अमर रक्खेगी अपनी साधना।

तुम आप एक डिप्टी कलक्टर की नव–पत्नी हो।' छत के ऊपर कमरे में जगदीश तन रहा था।

'हॉ।'.....वह भावना के साथ चौंक पड़ी, मानों वह एक स्वप्न देख रही थी। जगदीश कभी विनय से, कभी उत्तेजना से विवश कर रहा था उस शान्त रजनी में। वह निःसहाय थी।

'मुझे कल पार्टी में तुम्हें लेकर चलना है। हॉ फिर वे साड़ी और जम्फर.....।' जगदीश ने अपने कॉपते हुये हाथ से पकड़ लिया उसका कोमल हाथ। वह गिड़गिड़ाईं वह कॉप रही थी विह्स्की की बदबू से। उसके कॉपते हुये होंइ आगे बढ़ रहे थे। उसने बॉध लिया था वासना के फॉस में। स्नेहा के सामने उसकी कलुषित आत्मा नाच उठी। उसका पिछला व्यक्तित्व झलक पड़ा अब वह उसे फटकारा करती थी। उसमें बल आया। वह सॅभल गईं और कड़े कर दिये अपने दोनों हाथ। वासना–फॉस टूट गयां वह वहीं बड़बड़ाता हुआ रहा गया। स्नेहलता अपने कमरे में चली गई।

स्नेहलता नाली थी, समूची नारी, भरतीय वीरांगला। उन खद्दर की साड़ियों में छिपी हुई आदर्श की प्रतिमा थी। उसे हृदय, मे रख कर पूजा जा सकता था। परन्तु हृदय मन्दिर चाहिए उस प्रतिमा के लिये। उसके अपने जीवन के अलग शुभ्र सपने थे। अलग विश्वास था और था अलग आदर्श। वह पवित्र थी अपनी भावनाओं में। वह शान्ति की पूर्ण देवी थी। उसने वासना जाना नहीं; उसने तो पढ़ा था अपने जीवन में भारतीय वीरांगनाओं का उज्जवल इतिहास। उसी विश्वास की यह प्रतिमूर्ति थी। इसकी ऑखों में सुधा थी। पर पति देखना चाहता था ढलती हुई मादकता। यह थी सौम्य और गंभीर अपनी चाल में। पति देखना चाहता था एक अदाभरी नजाकत। जगदीश ने फिर से हाथ बढ़ाया था, उमड़ती हुई जवानी पर, प्रतिमा पर। अतः वह हलचल चाहता था, कंपन देखना चाहता था और देखना चाहता था गर्म–गर्म निःश्वासें।

वह अपने कमरे में खड़ी बाहरी वतायन से शुभ्र चॉदनी देख रही थी। उसे अपने पिता पर क्रोध आ रहा था। क्यों न उनके प्रस्ताव को काट दिया था ? क्यों न अपना अलग रासता पकड़ लिया इन्दु की भॉति उसने ?

स्वच्छ चॉदनी में उसे एक मूर्ति देख पड़ रही थी। वह शून्य में विलीन थी। हृदय के मनोरम सपने उसे चौंका दिया करते थे। 'महेन्द्र के हाथ में तिरंगा है। उसकी वह मस्ती की चाल। 'कदम–कदम बढ़ाये जा' खुशी के गीत जाये जा।' वह अहिंसा का पुजारी चलता होगा जनता की पुकार के लिये। 'कितना मूल्य है उसका, ओह। रूप टपकाता हुआ उसका व्यक्तित्व।' काश मैं इस शान्ति रजनी में वहॉ पहुॅच जातीं वह न जाने कहॉ होगा ? या तो अभी किसी पब्लिक मीटिंग में होगा 'या किसी समस्या को सुलझाने में चिंतित होगा। नहीं, रात अधिक बीत गई है, वह थका हुआ सो रहा होगा। उसकी थकान उसकी ऑखों में उतरी होगी। ऑखें कुछ खुली होंगी थकान की बेहोशी में।' मस्तक पर लाठी का घाव कितना अच्छा मालूम होता होगा। सुबह उसे कितने काम करने है, कहॉ–कहॉ मुख–मंडल। उन्नत ललाट, लम्बी–लम्बी ऑखें, लम्बा–सा सॉचे में ढला हुआ उसका रूप, पतले–पतले होंठों का मिलन, सब शान्त होंगे उस आत्मा की निद्रावस्था में। काश मैं चूम लेती चुपके से उस अधर–बिुदु को। सहला लेती उस ललाट के मृदुल–नव चिन्ह को। यदि वह जाग जाता ?' मैं सहलाने लगती उसके थके हुए पॉवों को। 'आपको सुबह बहुत दूर–दूर दौड़ना' है, मैं झट कह देती। मैं उसके पास क्यों आई ? मैं अंत में दिल खेल के कह देती। 'तुम मेरे हो, मैं तुम्हारे पास आई थी। वह हॅस पड़ता। मैं फिर चूम लेती उनके उठे हुए गुलाबी 'होठों को।'

'आज तुम क्या कर रही हो रात भर ?'

वह चौंक पड़ी, मॉनो उनका सर्वस्व लुट गया। वह चीख पड़ी अपने बंद कमरे में। बिजली बुझ गई।

कमरे में अन्धकार हो गया। वह लेट गई। उस समय कलाधारी बहुत पश्चिम चले गये थे। कमरे में छनी हुई चॉदनी फेनिल–सी स्वच्छ अब न थी। उसे नींद आ ही रही थी कि सहसा एक पक्षी बोल उठा। वह गाने लगा प्रभाव का मंगल गाल। प्राची रक्त–रंजित हुई। तन्द्रिल–सी झॉकने लगी अपने आवरण को टाल कर। वह झिलमिल–सा चिलमन फैल गया सारे विश्व में।

वह उदास–सी बाहर लॉन में टहल रही थी। वह ऑख खोलकर विश्व देख रही थी, जिसमें उसे महेन्द्र का मुख दीख पड़ रहा था।

'हुजूर अखबार।' अर्दली ने पुकारा। स्नेहलता का एकमात्र सहारा आ गया। वह देखने लगी उलट कर अखबार। उसका महेन्द्र आज कहॉ है, वह पहले उसे ढूढ़ने लगी। तब तक उसकी ऑखें पत्थर हो गईं अन्तिम पृष्ठ के ऊपरी भाग पर 'महेन्द्र जेल में।' उसके आगे अंधेरा हो गया। उस अॅधेरे में वही खादी पहले हुए महेन्द्र मार्चिंग गीत गा रहा था। वह विकल हो उठी इस अवस्था पर। आह ! उसका भाग्य नहीं इसमें सहयोग का। उस पर लाठी चलती हो, वह टेक देती अपनी कोमल बाहुओ को। उसके घाव पर वह कोमल पट्टी बॉधती। जेल में साथ चक्की चलाती। काश.....।' वह वहीं हाय मार कर लेट गई शोफे पर। अखबार का खूनी पृष्ठ सामने था। दूसरे कालम में मिस पंत का नाम झलक उठा। 'सुधा–अस्पताल' ने दो सौ घायल भर्ती किये। देश में यह हत्या–कॉड ?' वह और चिंतित हो गई ?

'देखो न, आज महेन्द्र सड़ेगा जेल में ?' सिगारदाने को हाथ में लिये हुये जगदीश ने कहा ?

वह चुप थीं, पर उसका हृदय भर गया खौलते हुए हृद–रक्त से।

•

'आपका महेन्द्र गिरफ्तार है।'

टंगा हुआ कर्नल का चित्र मूक था। मिस पंत उद्विग्न–शॉत रजनी में खबर दे रही थी उस चित्र को। वे पागल थीं। वे न जाने क्या–क्या बक रही थीं चित्र के सामने।

'हॉ ! वही आपकी धरोहर।'–धरोहर। ओर मेरे जीते मुझ से दूर ? मैं क्या उत्तर दूँगी ? उनके प्रश्न का ?'

मिस पंत चिंता में डूब गई। कमरे के आलोक में उनकी कटी हुई अंगुली चमक रही थी। बस ऑखें बरस पड़ी साकार चिंता पर। 'मैं महेन्द्र का हाथ न पीला कर पाई, ओर वह जेल में। क्षमा करना स्नेहा; तुम तड़पती होगी कहीं अपने विचारों में। तुम मुख छिपा कर कहीं रो लेती होगी महेन्द्र का नाम लेकर। आज तुम्हारा महेन्द्र जेल में है।'–उन्मुक्त ऑखों में हाथ में हाथ लिये महेन्द्र और स्नेहा गाते चले आ रहे थे। पर दूर ही दूर सहसा इतने हृदय से एक निःश्वास निकल पड़ा। 'काश ? मैं पापी, कलुषित आत्मा न होती, तो महेन्द्र को स्नेहलता मिल गई होती। मैं ही धूम्रकेतु तारा हूँ उन दोनों की शॉत रजनी में। 'आह, मेरा महेन्द्र बंद होगा गठोर प्राचीरों के बीच।'

यह सोचते–सोचते सुबह हो गई। अस्पताल से चीख आने लगी। घायलों की पट्टियॉ खुल रही हैं। मिस पंत के रोंगटे खड़े हो जाते थे मानव की निःसहाय चीख पर। वे चिंतित थी। सहसा जनता की गोल चली आ रही थी हॉस्पिटल के मैदान से। 'वीर महेन्द्र।' जिन्दाबाद।' गूँज उठा तुमुल स्वर जनता का। मिस पंत सामने उदास थी।

'हम महेन्द्र के लिये सत्याग्रह करेंगे।' कितनी मुट्ठियॉ बँधी हुई आकाश की ओर उठ गईं।'

'नहीं, सुनो !' मिस पंत ने कहा ?

'क्या ?' सभी उत्सुक–से दखने लगे मिस पंत को।

'महेन्द्र की जमानत हो जायेगी।'

'तो चलें सब'–

'हॉ'–सभी उदास मुखों पर हँसी खेल गई क्षण भर में।

•

'मेरे सामने महेन्द्र को गाली मत दो।'

'क्यों ?'

'इसका उत्तर मेरे पास नहीं, मैं पागल हो जाऊँगी।' स्नेहलता आवेश में आकर बोल रही थी। उसकी लम्बी–लम्बी ऑखें अश्रुमाला पहना रहीं थीं अपने बंदी महेन्द्र को। 'ईश्वर रक्षा करे मेरे महेन्द्र की ?' उसने निश्वास निकालते हुये कहा।

'मेरे महेन्द्र की !' इसके क्या मानीं ?' जगदीश ने रोब में कहा।

'वही, जो आप सोच रहे हैं; उसने छोटा–सा उत्तर दिया।

'यानी तुम्हारा महेन्द्र ! अब भी !!

'हॉ ! बल्कि सारी जनता का।'

जगदीश का नशा बढ़ता गया। स्नेहलता इससे अपरिचित न थी। वह न जाने कितनी बार फटकार चुकी थी जगदीश को, जो आज त्योरी बदल रहा है उसके सामने। वह एक विषाद का स्वप्न देख रही थी, जहॉ महेन्द्र बन्दी है।

अच्छा !.....अब की.....मैं.....फॉसी.....दूँगा उस सा.....को।' मुकद्मा.....मेरे.....इज.....ला....श.....में.....हैं.....।' वे बड़बड़ा गये। सामने स्नेहलता जल उठी।

'चुप !' वह भूलकर फटकार उठी।

'अच्छा रानी !.....पर.....मुझे।' उसने बड़बड़ाते हुये फैला दिया अपना बाहु–पाश। वह कॉपने लगा। वासना का ज्वार आ गया क्षण भर में। उसके कॉपते हुये हाथ आगे बढ़े स्नेहलता ने मरोड़ दिया वहीं उन बढ़े हुये हाथों को। उसका नारीत्व जाग उठा। क्या वह अपनी विषाद की दुनिया में भरी न रहने पाये।

डिप्टी साहब का समय हो गया कचहरी जाने के लिय। चपरासी इधर–उधर दौड़ने लगे। स्नेहलता ऑखों में ऑसू लिये अपने कमरे में अनयमनस्क खड़ी थी। 'अब महेन्द्र को देख लूँगा, उसकी फॉसी करा दूँगा'–जगदीश की बातें अब उग्र रूप धारण कर सामने आ गईं। वह कॉप उठी। जगदीश कितना पड़ा दुश्मन है महेन्द्र का। उसे महेन्द्र की पिछली फटकारें याद होंगी। वह इसका बदला ले सकता है। उसके ऊपर बिजली गिर पड़ी। वह सिहर उठी भावी आशंका से। झट उसने तार दिया, इसे लिखकर मिस पंत के पास।

•

'पॉच हजार रूपये देने हैं जमानत में।'

मिस पंत डॉक बंगले के बाहरी लान में चिंतित हो गई। उनके सामने बैठी हुई जनता क्षणभर के लिये चुप थी।

'तो क्या होगा ? महेन्द्र को छुड़ाना है।'

'हॉ ! मुझे पता न था इतने रूपये का। मेरे पास चार हजार रूपये है।' रूपया कल अव्वल वक्त में ही जमा करना है।

'ऐसा क्यों है ? एक वृद्ध ने पूछा।

'यहॉ के डिप्टी कलक्टर की कृपा है।'

'आप चिन्ता न करें। हम लोग महेन्द्र की भीख मॉग कर छुड़ायेंगे।

'भीख ! और महेन्द्र के लिये ?' उन्होंने एक निःश्वास लेकर कहा।

सारी जनता शीघ्र ही गिरोह में निकल पड़ी चंदे के लिये। गूॅज उठा टोली का जय–स्वरं उठा ली झोली सबों ने।

'स्नेहलता ! वही डिप्टी साहब की पत्नी है। पर वह तो बन्द होगी प्रतारण की कठोर प्राचीरों में। वह तड़पड़ाती होगी अपने महेन्द्र को वहीं सुनकर। वह अवश्य लड़ती होगी–इससे मिलने के लिये। पर हाय ! वह पछाड़ खाकर गिर पड़ती होगी।' –यह है मानसिक गुलामी जिससे मानव कभी नहीं छुट्टी पा सकता।' स्नेहलता का अभी कल का पत्र उनके सामने आया था। वह कितना भयानक था। स्नेहलता उनकी वासना–रानी नहीं है अतः उसे नाना प्रकार की पीड़ा दी जा रही है। महेन्द्र को जेल से छुड़ाने के लिये उसने डिप्टी साहब से प्रार्थना की थी, पर उन्होंने कितना भयानक वाक्य कहा था–'तुम्हारी बात और महेन्द्र ! सड़ने दो जेल में, मैं अब बदला लूॅगा उसकी पिछली फटकारों का। वह मेरा घोर शत्रु !' मिस पंत सोच रहीं थीं इन बातों को वहीं अकेले कमरे में।

शाम हो गई। जगदीश बाबू क्लब चले गये। बॅगले के सामने स्नेहलता उद्विग्न बैठी थी। बॅगला सूना था। सहसा 'महेन्द्र जिन्दाबाद।' के नारे कान में आ पड़े। वह चौंक पड़ी। पीछे तिरंगे के पीछे जनता की एक टोली सामने आ पहुॅची। उसका हुदय भर गया राष्ट्रीय गान के लहरियों से। कितना अपनत्व था उसका इस राग–ध्वनि में। वह उन्मुक्त देखने लगी। स्नेहलता ने आदर से कुशल पूॅछा। जनता का हृदय–भर गया उसके विशुद्ध खादी फूल वस्त्रों को देखकर। उसने याचना सुनी। उसका भाग्य आज हॅस पड़ा है उस पर, वह कुछ चढ़ा पा रही है महेन्द्र के पैरों पर। उसने झट एक वेग दिया लीडर को। वह झूम उठी आज अपना स्वर्ण कंगन और सौ–सौ रूपये के दस नम्बरी नोट दे कर। आज उसका जीवन सफल हुआ। आज उसने साक्षात् पूजा कर पाई अपने हृदय–देवता की। वह बहुत देर तक खड़ी रही बॅगले की ऊॅची सीढ़ियों पर।

•

'तुम आज इतनी खुश क्यों हो ?' यही, कि मैं आज चिंतित हूॅ।' कचहरी से आते ही जगदीश ने पूछा स्नेहलता से।

'नहीं ! नहीं ! आपको चिन्ता कैसे ?' उसने आज हृदय खोलकर प्रश्न किया है जगदीश से। डिप्टी साहब आश्चर्य में पड़ गये उस मधुर–स्वर को सुनकर।

'महेन्द्र बाबू जमानत पर छूट गये; प्रसन्नता से उछलती हुई स्नेहा ने कहा।

तो इससे क्या ? अभी बहुत से अवसर हैं। वह सरकार का बागी है। इसे सरकार जानती है। वह कभी भी शिकार हो सकता है।'

'चुप रहिये; शिकार हों उनके दुश्मन।'.....वह तिलमिलाती हुई दूर खड़ी हो गई।––'काश मैं आज महेन्द्र को एक हार पहना पाती। मैं क्षण भर के लिये डॉक बॅगले पर मिस पंत और महेन्द्र को ऑख भर देखती। वह महा–मानव आज लद गया होगा सुमन–मालाओं से। उसके कितने नारे उठ रहे हैं आज शहर में।' स्नेहलता सोचती हुई दौड़ गई माली के पास और सुमन–हार बनाकर माली के हाथ चुपके से महेन्द्र को पहनाने के लिए कहा। कितनी गुलाम थी एक समाज की आदर्श महिला अपने विचारों में उसे आर्डर नहीं किसी से मिलने को। उसके पिता ने शादी किया है। खुशी से जीवन निर्वाह करने के लिये।

•

'इतने घायल।'

'जी हॉ, कल शहर में गोली चली है।' चीफ वाड्डन ने कहा।

मिस पंत और महेन्द्र घबड़ा उठे। सरकार की यह बर्बरता; निरीह बच्चों, स्त्रियों पर गोली। मिस पंत सीधे अस्पताल में गईं। महेन्द्र सीधे शहर की ओर रवाना हुआ।

कांग्रेस दफ्तर में महेन्द्र का स्वागत हुआ। वहॉ गोली चलने का कारण आ चुका था। 'शहर के सप्लाई–दफ्तर के सामने कपड़े बिक रहे थे। देहात की सारी स्त्रियां टूट पड़ी थीं उन कपड़ों पर। इन्तजामकार और बॉटने वाले सरकारी ठेकेदार, अफसर, और पुलिस थी। प्रश्न था खुले हुये तन को ढकने का। स्त्रियॉ भीतर दफ्तर में ठुँसी हुई थीं। तुम्हें कपड़ा मिलना चाहिए, उनका बीमार बच्चा ठिठुर कर न मरे; यही थी भावना उनके सामने। अतः वे तैयार थीं सब शर्तों पर। बाजार सस्ता था। दिन दहाड़े कपड़े के बदले नव वधुओं का सतीत्व बिक रहा था। कौड़ियों पर। उनका सर्वस्व लुटा जा रहा था दो गज कपड़ों पर।––शाम हो गई थी। अभी भीड़ लगी ही थी। घर के नवजवान, बच्चे अपनी बहन–बेटियों की खोज में आये। उन लोगों ने पूछा उनकी बहू बेटियॉ कहॉ हैं ? उत्तर मिला–यहॉ नहीं आ सकते।। क्षण भर में उन्हें बात मालूम हो गई। उनका रक्त खौल उठा। बॉहें फड़क उठीं। बस क्या था, वे टूट पड़े निहत्थे खड़ी आर्म्ड पुलिस पर। पर परिणाम हुआ वही 'हत्या–कॉड।'

महेन्द्र के कान खड़े हो गय। रक्त खौल उठा, पर अब हो ही क्या सकता था। सरकार की यह नित्य की दिनचर्या थी। महेन्द्र के सामने सरकारी बर्बरता, खून, भूख, पीडित, कंकालों का दृश्य–श्मशाल के चित्र, भूख की लपकती ज्वाला सब क्षण भर में ऑखों के सामने छा गये।

क्या महेन्द्र के लिये इस दुनिया के बाद कोई और दुनिया है जहॉ वह शान्ति पा सकता है ?' वह सोचने लगा। तब तक बाहर सूर्य की लाली सिकुड़ने लगी। उसे अपने प्रश्न के बाद आज 'इन्दु' की बरबस याद सताने लगी। वह न जाने कहॉ होगी। अगर वह अब मिल जाती, तो वह अवश्य महेन्द्र से प्रेम करती। अपनी शीतल छाया में वह महेन्द्र को बैठने देती। पर अब वह कहॉ होगी ? महेन्द्र सोचते हुये उठ गया। और उसके पैर अनजाने बढ़ गये शहर की ओर। उसके सामने 'स्नेहलता' का वह हार, उसकी उपासना, अपना रूप लिये आगे–आगे चल रहा था। वह रास्ते में भी भावनाओं से छुट्टी नहीं पा रहा था। वही बुरी तरह से घिर गया था स्मृतियों से। यह है जब प्रकृति और मानव–स्वभाव जिसके घबड़ाने पर स्वप्निक बातें रूप–सी खड़ी होती हैं, वह प्रेम करने लगता है अपनी पिछली कमजोरियों से भी। वह भूला–सा चला जा रहा था ! शहर का कोलाहल वह मानों सुन ही नहीं रहा था। सहसा उसकी अगुलियॉ रूक गईं सिर के घाव पर। वह चौंक सा पड़ा। उसे वे दिन उसी दम याद आ गये जब वह बेहोशी में किसी के कोठे पर था, उसने दम याद आ गये जब वह बेहोशी में किसी के कोठे पर था, उसने कितनी बड़ी सेवा की थी। उसने यही चौराहे से तो उस कमरे को देखा था, जहॉ वह बरबस खिंच उठा था। महेन्द्र का प्रेम बरस पड़ा। उसे देखने के लियें दूर से ही तिनमंजिले पर वह कमरा जगमगा रहा था।

'आह ! इतने ऊपर। वहीं मैं लेटा था बेहोशी में।'––वह स्तंभित हो गया। आज वह कैसे जाय इतने ऊपर। यह तो गली थी उन लोगों की। वह वहीं खड़ा था, उन्मुख हृदय उस कमरे को देखता हुआ। मानों कोई दूर का यात्री चॉदनी रात में ताजमहल देख रहा हो।

सहसा कोई नवनीत की पुतली, शुभ्र–वासना, फेनिल सी वस्त्रों में गुँठित, अलौकिक शोभा से आलोकित उस दूर के वातायन से झॉकने लगी। महेन्द्र पर जादू फिर गया। वह शुभ्र वासना देर तक महेन्द्र की ओर देखती रही वह सहसा खिंचने लगा उधर अपनी चिर परिचित की ओर। उसके पास वे पट्टियॉ नहीं तो उसी के बहाने जाता। वह कौन होगी इतने ऊपर उस पर प्रेम करने लगी ? वह ठगा–सा खड़ा रहा। सजी हुई कारें महकते हुये पुष्पहार। कितने युवक उपहार लिये मुड़ रहे थे। उस गली में। महेन्द्र मुँह छिपाकर बड़ी देर तक देखता रहा।

•

नमस्ते !' शुभ्रवासना सामने हाथ जोड़े खड़ी थी। बातों पर बहती हुई अलौकित ध्वनि रूक गई। महेन्द्र का दिल हिल गया। युवती स्वंय डर रही थी। समाजी आश्चर्य में थे आज। महेन्द्र पैर दबाये बैठ गया वहीं कोच पर। युवती अपलक नयन से उसके ऊपर सर के घाव को देख रही थी। महेन्द्र की ऑखें मानों उस मुख पर जड़–सी गयी थीं।

'आज मेरी भाग्य है।

'क्यों ? महेन्द्र ने पूछा। युवती चुप थी।

'अच्छा मेरा एक सेवा !' उसने बात काटकर कहा।

युवती के मुख पर आज अलौकिक शोभा फूट पड़ी थी। उसकी मुस्कान बढ़ती जा रही थी। इसका न जाने क्या कारण था। महेन्द्र भूल गया उस फिजा में संगीत की मृदु–लहरियॉ फैल गईं क्षण भर में। गॅूज उठा महेन्द्र के मानव–भवन में क्षण भर में। तरूणी ने फाटक बन्द करवा दिया आज, बाहर एक नौकर लगा दिया, कि आज वे किसी अन्य को गीत न सुनायेंगी। महेन्द्र भूल गया उस अनंत स्वर–लहरी में तरूणी ऑखें भीग गईं थी आज। महेन्द्र चकित था उसे देखकर।

'आपका परिचय ?' महेन्द्र ने धीरे से कहा।

'मेरा !.....युवती के होश उड़ गये। उसके दोनों होठ उठे ही रहे। मैं नर्तकी हूॅ।' उसने धीरे से कहा।

इसके बाद वह नित्य सप्ताह भर वहॉ ऑख बचाकर जाता रहा।

•

'बहुत दिनों के बाद आये महेन्द्र !'

'हॉ ! मैं शहर में कुछ जरूरी काम में फंस गया था।

'पर अब महेन्द्र, बिना तुम्हारे अकेले नहीं रहा जाता।' तुम इतने दिनों तक बाहर न रहा करो।' मिस पंत ने उदास होकर कहा।

'आप घबड़ायें नहीं।'

'पर महेन्द्र.....मैं बेकार जीती रही। मैं तुम्हारे लिये कुछ नहीं कर पाई। मि0 कर्नल क्या सोचते होंगे कहीं।'

ओह ! आपकी सेवा.....किसके जबान पर नहीं है 'आपकी राष्ट्रीय–सेवा कितनी पवित्र है अस्पताल आप के कर्मों से।'

मेरे कर्म की याद न दिलाओ महेन्द्र !'.....मेरे ही कारण तुम अभी अविवाहित हो.....।' मिस पंत का हृदयांचल भीग गया। महेन्द्र को भी याद आई अपने अदृश्य पिता की।

'मैं तुम्हें किसके हाथ सौपॅू महेन्द्र। मिस्टर कर्नल आज तक नहीं आये। यह अस्पताल उस मिलन के साधन–रूप में कितने वर्षों से खड़ा है।' मिस पंत फफक पड़ी, उनका अंचल छोर भीग गया ममता की पीड़ा से।

'आप चिन्ता न करें; वे अवश्य आयेंगे, फिर मैं तो आप के साथ हूॅ। फिर अभी भी तो आपके पास बल और पौरूष है.....

'हॉ पर मैं कब छुट्टी पाऊॅगी अपने पाप भार से।'

•

'यह आप का पत्र है।' डाकिये ने पत्र सामने डाल दिया।

'यह तो स्नेहा का पत्र है मॉ।' महेन्द्र ने प्यार से कहा।

'हॉ उसके नित्य तुम्हारे पास पत्र आते हैं, वह कितनी महान् है अपने विचारों में महेन्द्र !'

'हॉ, सुना है, कि इस बार उसीकी दया से मैं जमानत पर छुटा हूॅ।'

'हॉ.....पर.....वह कितनी दुखी है.....उसके साथ।'

'पत्र में क्या है महेन्द्र।'

'बहुत अफसोस है; अबकी बार जगदीश ने उसकी समस्त खद्दर की साड़ियॉ कहीं फेकवा दी है; उसने जल्दी से साड़ियों के लिये प्रार्थना की है।' वह चिन्तित हो गया।

'तुम कार से शीघ्र साड़ियॉ ले जाओ महेन्द्र, और देख भी आवो उसे।' मिस पंत ने कहा।

•

'आपकी तशरीफ यहॉ कैसे ?' जगदीश ने अपनी अधखुली ऑखों को उभाड़कर कहा।

'तुम्हारे पास नहीं.....। महेन्द्र ने झटके से एक छोटा–सा वाक्य कहा।

'तुम मुझे तुकारता है ? मैं डिप्टी हूँ; मैं तुम पर अबकी अवश्य गोली चलाऊँगा।' उसने झुमते हुये कहा।

सहसा किसी की पद्–ध्वनि आई, महेन्द्र का हृदय धक्–धक् करने लगा। आज वह ऑख भर स्नेहलता को देखेगा। वह कितनी दुखी है, इस शराबी के साथ। सामने स्नेहलता आ गई। वह दौड़कर जीने पर से आई थी। उसके स्वॉस फूल रहे थे। वह कुछ कहने के बजाय देखती ही रही महेन्द्र को। कार में से उसने साड़ियों का एक गट्ठर रखवा दिया स्नेहलता के सामने। वह खिल गई कली की भॉति आज महेन्द्र के सामने।

यह साड़ियॉ कैसी ? हटाओ इसे !! जगदीश ने गर्जते हुये कहा।

खादी की साड़ियॉ ! स्नेहा के लिये !'

'तुमसे, मेरी स्नेहलता का क्या संबंध।' जगदीश ने उठते हुये कहा।

'आपसे कुछ मतलब नहीं, इन चीजों से।' महेन्द्र के सामने आती हुई स्नेहलता ने कहा। जगदीश का भी रूप कुछ बदल गया शराबी का नशा कुछ ढीला पड़ गया। वे तिलमिलाते हुये वहीं लेट गये अपने शोफे पर। स्नेहलता ने अपना अंक भर लिया उन अमूल्य साड़ियों से।

'यही हैं आपके घाव !' कहकर स्नेहलता ने चूम लिया महेन्द्र का स्थूल ललाट। स्नेहलता चकित हो गई, कि उसने कैसे चूम लिया है आज महेन्द्र को। उन्हें कुछ बुरा न लग गया हो। उसके हृदय में भय, लज्जा गुदगुदी सी बन गयी। आज वह साकार प्रतिमा को पा गई है अपने हृदय मन्दिर में। वह क्या करे मिलन के लघु–क्षण में, यही सोच रही थी। उसकी ऑखें चिपक गई थीं, महेन्द्र के मुख पर।

'क्या अब चर्खा नहीं चला पाती ?' महेन्द्र ने कमरे में चर्खे को देखकर कहा।

'अब कहॉ महेन्द्र। वह उसकी कोमल हथेलियोां को सामने कस रही थी अपनी कोमल हथेली से। वह अपलक देखती रही महेन्द्र को। काश ! जगदीश का नशा आज दिन भर न उतरता, वह बॉधे रहती महेन्द्र को अपनी हथेलियों से। उसे रह–रहकर आज बदन में ऐंठन होती थी। उसकी बाहें फड़क उठती थी सामने महेन्द्र को अपने बाहु–पाश में कस लेने को। उसकी ऑखें छलछला आईं थी। उसकी सॉसे गर्म तेज चल रही थीं। उसके बदन से कोइ सुगन्धि आ रही थी। उसका मुख समीप पहुँच जाता था। उसके पतले होंठो में आज फड़कन थी। वह बराबर आज अपने का उस अंक में छिपा

देना चाहती थी। वह जीवन के सम्पूर्ण सपने को आज साकार कर डालना चाहाती थी। उसके होंठ समीप पहुँच–पहुँच कर रूक जाते थे। दोनों न जाने कितनी देर तक चुप थे। जगदीश को ज्ञान न था कि महेन्द्र ऊपरी कमरे में है। महेन्द्र जाने के लिये तैयार था। वह उसे अपने हाथों से पकड़े हुये भी कुछ कह न पा रही थी।

'मैं आता रहूँगा अब स्नेहा, तुम्हारे पास।' महेन्द्र ने हाथ छुड़ाते हुये कहा।

'वह चुप थी। महेन्द्र से सटी हुई वह ऊपर देख रही थी महेन्द्र के होंठों को। उसके होंठ खुले थे सीपी की भॉति, मानों वह स्वाति–बूंद चाहती थी अपने होंठों में। वह गर्दन सिकोड़ ऊपर देख रही थी चातक की भॉति अपने स्वाति नक्षत्र की ओर। वह चुपके–चुपके सिमिट सी गई जाते हुए महेन्द्र के वक्षस्थल से। दो शरीर मानों एक थीं। उसने अपने दोनों हाथों से महेन्द्र को बॉध लिया था। वह अपलक देख रही थी एक दुनियॉ, जो स्वर्गमयी थी महेन्द्र के मुख पर।

महेन्द्र की कार अभी खड़ी है ! उनसे कह दो वे छोड़ दें मेरा बॅगला जल्दी से, नहीं तो.....।' जगदीश की गरजती हुई आवाज उस लोक तक पहुँची, जहॉ दो आत्मायें एक होने को थीं। चातकी सी साधना भंग हो गई। महेन्द्र दूर हटने लगा। स्नेहलता चीख पड़ी।

'आह ! आह ! भीग गया उसका अंचल–छोर। महेन्द्र ने भी देखा, उसका वक्षसिल तर था।

•

जागते ही जागते सुबह हो आई। प्राची का अंचल रंग उठा महेन्द्र के मन में बाढ़ आ गई थी विचारों और तर्कों कीं रात बीत गई। पर वह इससे छुट्टी न पा सका। वह अन्य मनस्क सा टहल रहा था लान में। वह कभी–कभी रूक जाता था। वह भूला–भूला सा बहुत दूर देखने लगता था। उसकी ऑखें दूर दिनिज तक फैल जातीं थीं। उससे सिमटा हुआ अंधकार उस युवती के अलक जाल की याद दिलाता था। महेन्द्र क्षण भर के लिये सिहर उठता था। दूसरी ओर प्राची की लालिमॉ उस दिन के हत्याकॉड की याद दिलाती थी, जब वह लथपथ खूनों से सड़क पर पड़ा था। तब उसकी भौंहें खिंच पड़ती थीं।

सहसा पीछे से एक बहुत घबड़ाया हुआ आदमी आया। उसके मुख से मालूम हुआ, कि शहर से सटी हुई एक–दूसरी जगह सरकार बहुत बर्बरता दिखा रही है। जबरन चंदे वसूल किये जा रहे हैं, कस्बे के कस्बे, गॉव के गॉव लोग बच्चों; स्त्रियों के सहित भागे जा रहे हैं। महेन्द्र की पुकार है। इधर मानसिक युद्ध उधर राजनैतिक समस्या। महेन्द्र तिलमिला उठा अपनी भावनाओं में ओर उसके दॉत पिस गये निकम्मी सरकार के ऊपर।

•

'जबरन चंदा नहीं दिया जायेगा।' महेन्द्र ने ऐलान कर दिया। भागी हुई जनता उसकी शरण में आई। सबमें जान आई। सरकार ने ऐलान कर दिया, महेन्द्र सरकार का बागी है। वह गिरफ्तार कर लिया जाय, तभी चंदा मिल सकता है। जिसकी एक–एक स्पीच में जनता बागी बन जाती थी सरकारी की। चंदे की बात कौन करे सत्याग्रह आरम्भ हो गया। अहिंसा का

व्रत ठन गया। इधर सरकार कॉप गई। दूर–दूर के कट्टर अफसरों को नियुक्त किया गया, इस जिले को शॉत करने के लिये। इधर सरकार की ओर से आर्डिनेन्स आ गया कि कि सरकार किसी भी प्रकार चंदा वसूलेगी, बरगलाने वालों को बड़ी से बड़ी सजा मिलेगी। फिर क्या था, आ गया गुलामशाही में जोश। सभी लपक कर दौड़ पड़े फर्मा बरदारी के लिये।

'सरकार चंदा लेगी, तुम्हें महेन्द्र इससमें नहीं पड़ना होगा।'

'क्यों ?'

'तुम्हें तो सरकार अभी ही पकड़ लेगी, पर चंदा भी लेगी।'

'यह नहीं हो सकता' सरकार को पहले अन्न वस्त्र भी देना होगा फिर चंदा।'

'हम बहस नहीं जानते; हॉ हम चंदा लेंगे।'

'यह कभी नहीं हो सकता।' महेन्द्र ने फिर दुहराया।

दूसरे दिन वारंट आ गया महेन्द्र के नाम। इधर इनक्लाब के नारे ओर बढ़ गये। जनता के जीते जी महेन्द्र की गिरफ्तारी नहीं हो सकती। अब वातावरण और भी गंभीर हो गया। महेन्द्र सब का गौरव है, लाखों निहत्थों का वही एक अस्त्र हैं महेन्द्र ने एक बार जिल उजड़े हुये गॉवों को देखा, बस निकल पड़े बच्चे, नर, नारियॉ सत्याग्रह के लिय। फहरा उठा कौमी झंडा लाखों से ऊपर सत्याग्रही जनता के आगे।

'चंदा नहीं है।' असंख्य मुख से बंधा हुआ एक स्वर निकल पड़ा वायु मंडल में।

'तुम्हारे नाम वारंट है।' एक कर्मचारी ने महेन्द्र के सामने कहा।

'सब साथ जेल जायेंगे।' महेन्द्र को न गवायेंगे !!' जनता की मुट्ठियॉ उठ गईं हवा में। महेन्द्र को समस्त जनता ने घेर लिया।

'भागो, नहीं गोली चलेगी; एक अफसर ने गर्व से कहा। पर कोई जैसे सुन ही नहीं रहा था। फिर वही तुमुल स्वर गूँज उठा वायु–मंडल में––'सब साथ जेल जायेंगे जेल; महेन्द्र को न गवायेंगे।'

जनता की अहिंसात्मक शक्ति ने अफसरों को सोच में डाल दिया। अब कोई चारा न था। महेन्द्र जेल जाने को तैयार था, पर जनता उसे घेरे थी मधुमक्खी सी।

'जनता के साथ अच्छा व्यवहार हो।' महेन्द्र चिल्ला–चिल्ला कर कह रहा था। पर नौकर–शाही एजेन्ट तैयार न थे। तब तक बुलाये हुए शिकारियों के हाथ फड़क उठे, केवल आर्डर की देरी थी। पड़ने लगे डंडे और बेंत, पर जनता वैसी खड़ी ही रहीं विकराल डंडों के प्रहार से जनता छटपटा कर रह जाती थी। हड्डियॉ टूट गईं, सर रक्त–रंजित हो गयां पछाड़ खाकर गिरने वाली स्त्रियों को देखकर महेन्द्र चिल्ला उठा, उसने सबके बीच से उछलकर एक बार आना चाहा, नौकरशाही कुत्तों के मुख पर थूकने के लिए। पर जनता उसे घेरे ही रही, कहीं उनका कोहनूर न लूट जाय। कोई चारा न रहा अभी महेन्द्र बचा है, डिप्टी लोगों की ऑखों में महेन्द्र तैर रहा था। यदि उसके ऊपर वार हो जाय !

सहसा कहीं से आवाज आई फायर ! बढ़ गये हाथ अफसरों के। रिवाल्वर ठहकने लगे। जनता मे चित्कार मच गया। लग गया ढेर लोगों का। भर गया आहों मसे आकाश, रंग उठी पृथ्वी खूनों से; पवन रूक गया, पृथ्वी सहम गई। महेन्द्र

अब भी सामने नहीं था। आखें खोज रही थीं महेन्द्र के निशाना के लिये। वह जनता के बीच से आगे मरना चाहता था। महेन्द्र सबको चीनता हुआ सामने था। शिकारी की पलकें उठ गईं। अब मिला कब का शिकार। वह सीना खोल दहाड़ रहा था; नीच ! कुत्ते !! पर था। पर था। वह पिस्तौल के आगें हाथ सॅभल गये। निशाने तन गये। महेन्द्र के सामने गोली सरसना उठी। सहसा एक छाया उससे लिपट गई और छिपा ली उसने अपने अन्तराल मं वह गोलीं चिपका हुआ शव गिर पड़ा छटपटाता हुसा सामने। महेन्द्र चिल्ला उठा। वह लेट गया उसी घाव पर। शिकारी सहम गया। फिला बदल गई। समीर खड़ा हो गया आरती लेने के लिये। आकाश नत हो गया देखने के लिये। नक्षत्रों ने मुस्करा दिया। लोगों के बाजार में एक शव पर भीड़ लग गई !

बॅधी हुई पगड़ी के नीचे बिखर पड़ी केश–राशियॉ घाव के ऊपर उभरती हुई जवानी ने मुस्करा दिया। महेन्द्र ने भरी लिया खूनी शरीर को अपने अंक में। उसके होंठों पर मुस्कान खेल रही थी, मानों वह साधना में अवतरित हो गई है। शिकारी की ऑखें गड़ गईं। महेन्द्र विलाप कर उठा उसे अंक में कसे। आह ! देवी स्नेहलता। मेरा इतना मूल्य !! मुझे क्यों नहीं मरने दिया !!''

जगदीश की ऑखें स्थिर हो गई स्नेहा पर। ''अरे यह यहॉ कैसे।'' उन्होंने हाथ बढ़ाया। शरीर कॉप गया। महेन्द्र ने उन हाथों को मरोर दिया। तुम छू नहीं सकते इस पवित्र आत्मा को।' खूनी ऑखों में पानी भर छलक पड़ा। महेन्द्र ने उसे पलकों में ले लिया।

उसके दोनों हाथ अभी कसे थे महेन्द्र की कमर से। उसी अधखुली ऑखों में संतोष था। मुख अनंत पिपासा की अतृप्ति लिये सफल चेष्टा की रति–हीन अवस्था में सदा के लिये खुला ही रहा। अधखुली ऑखें न जाने किस छाया–लोक में मिलन के गीत गा रही थीं। उसमें प्रकाश था।

•

स्नेहा के मजार पर मधुर–मधुर दीपक जल रहा है। शमा घुल–घुल कर हॅस रही है। सामने अनन्त शून्य था। मजार के अन्तराल में कब से स्नेहलता लेटी थी। उसकी अनंत प्रतीक्षा घुल रही है शर्मा में। उसके उत्सर्ग ने कितनों को महान पाठ पढ़ा दिया है। महेन्द्र को। मजार अस्पताल के ठीक सामने था। महेन्द्र नित्य अपने हाथों से दीपक जलाता था। उजाली रात में वह यह दुग्ध–फेनिल सा शुभ्र मजार निखर पड़ता था। यह था महेन्द्र का ताजमहल। इसमें मुमताज से सौगुनी मूल्य की उत्सर्ग रानी लेटी है। महेन्द्र मजार को तरह कर देता था, स्नेहा के अतृप्त प्रणय वेदना को अपने आसुओं से।

•

चार दिन हो गये; महेन्द्र चिराग न जला सका उस मजार पर। मिस पंत श्रद्धा से उस पर चिराग जला आती थीं।–– शॉत रजनी का प्रथम प्रहर था। अस्पताल में कोई घायल बुरी तरह से कराह रहा था। उस कराह में महान् पीड़ा थी। दाइयॉ, नर्सें, उसके दर्द को कम न कर पा रही थीं। मिस पंत से रहा नहीं गया।

'कहॉ दर्द हो रहा है ?' उसके घाव को सहलाती हुई मिस पंत ने पूछा। वह चुप था। उसकी ऑखें खुली देख रहीं थी मिस पंत को।

''बोलो''––

'बस अनिमि क्षण में आप को देखा करूँ'––मिस पंत का हृदय भर आया, दया ओर सहानुभूति से। घायल की ऑखों में खून जम गया था। दोनों किनारों पर दो अश्रु–बिन्दु झलक रहे थे ?

'तुम मुझे क्यों देख रहे हो घायल ?'

'वैसे ही'–घायल की ऑखें भर आईं। अब वे छलकना चाहती थीं। मिस पंत की भी ऑखें बरस पड़ी थीं। घायल का अन्तिम समय देखकर।

''घबड़ाओ नहीं।''.....कोई अन्तिम कामना ?

'बस आपको देखता रहूँ.....आप मिस पंत !.....'

उसके प्रस्ताव ने आश्चर्य में डाल दिया मिस पंत को। वे सिहर–सी उठी। घायल अपलक देख रहा था मिस पंत को।

'यह क्या देश.....सैनिक ?'

'चरण–रज !' .....एक क्षीण आवाज आई। मिस पंत फफक पड़ीं उसके अन्तिम क्षणों को देखकर। वह अस्फुट स्वर से कुछ कह रहा था मिस पंत ने उस पर कान लगा दिया।.....मैं बहुत बड़े दल का क्रान्तिकारी.....कोने–कोने में सैनिक.....मेरे नेता.....कौन ?' मिस पंत ने पूछा।

.....वही 'कर्नल आर0 पी0 सिंह.....आह !'

'आह ! वे कहॉ ?'

'यह नहीं पता.....पर आये.....।' घायल का स्वर बंद हो गया ऑखें पथरा गईं। मिस पंत चीखती ही रहीं पर वह चल बसे।

•

'कहो देश–सैनिक ?'

'नहीं, यह उदासी कैसी ?' युवती ने प्यार से पूँछा।

महेन्द्र चुप था उस तिन मंजिले कमरे में। वह क्यों नित्य खिंच जाता है यहॉ ? इसमें इतनी प्रणय–शक्ति कहॉ.....वह नित्य महेन्द्र का पथ जोहती थी अपने उत्मुक्त वातायन से।

'मेरे देश–सिपाही.....।'

'नहीं ! मुझे ऐसा न कहो। यह संज्ञा उसी के लिये जो हॅसती हुई बलि–वेदी पर चढ़ गई है।'––आगे महेन्द्र का गला रूँध गया ! ऑखां के सामने 'स्नेहलता का उत्सर्ग प्रेम–रूप में चित्रित हो गया।

'आज आपको क्या हो गया है ?'

'कुछ नहीं; एक गीत सुनाओ.....।' मैं किसी के मजार पर दो ऑसू के बूँद चढ़ा रहा था।

'वह कैसा मजार ?'

'वह न पूँछो; महेन्द्र की ऑखें सजल हो गईं।

'आखिर, '.....युवती हाथ जोड़कर पूँछ रही थी।

'उसका पवित्र नाम था स्नेहलता। वह मुझसे.....आह.....बस अब आगे सब न कहलाओ।

युवती का मुख लाल हो गया। पेशानी चमक उठी श्रम–बिन्दुओं से। उसकी भी पलकें भर आईं। वह और गंभीर हो गई।

'तुम क्यों रो रही हो.....?'

'यह न पूछिये।

'नहीं, बताना होगा, तुम मुझे परिचित–सी लगती हो। ठीक तुम्हारी ही तरह.....मेरी इन्दु रानी।' महेन्द्र विचारों से दब गया। सामने युवती मलीन–सी खड़ी थी। महेन्द्र उसे अपलक देख रहा था। इस गली में यह नर्तकी, इस विचारों की; फिर इसमें सात्विकता ! न रेशमी साड़ियॉ हैं न आभूषण। क्या हैं उसमें ?'

'तुम क्यों मुझे.....प्यार.....हो ?' महेन्द्र ने सहमते हुये पूँछा। 'यह न पूछिये। हॉ! मैं इतना बता सकती हूँ, कि.....मैं तब से नर्तकी हो गई, वेश्या नहीं !'

'कब से ? महेन्द्र ने आश्चर्य से पूछा।

'बी0 एस0 सी0 के बाद, जब मैं डाक्टरी न पढ़ पाईं।'

'बी0 एस0 सी0 और तुम नर्तकी.....।'

'हॉ ! इसमें आश्चर्य क्या ?'

'ऐसी ही.....इन्दु रानी....।'.....अच्छा। हॉ.....तो क्या बी0 एस0 सी0 के बाद आपको यहीं होना था ?'

'नहीं.....और न पूछिये।' युवती की ऑखें बरस रही थी।

वह हाथ जोड़े समीप थीं महेन्द्र के हाथ में उसकी कोमल हथेली थी। महेन्द्र सिहर उठता उसके स्पर्श से। उसे उस नयी और अप्रत्याशित अनुभूति के कारण मानसिक पीड़ा हो रही थी। उसके लिये महेन्द्र ललचा रहा था। वह प्रयन्त करने पर भी इन अनुभूतियों के घटाटोप से अलग न हो पाता था। न चाहने पर भी उसकी इच्छा होती थी, कि युवती को वह अपने बाहु पाश में कस कर जकड़ ले। वह उसकी कोमल बॉहों में रत हो जाय। वह नर्तकी है। इतनी शिक्षिता है। फिर भी इतनी आदर्श हैं उसकी इच्छा होती थी, कि वह कहीं दुनिया से दूर उसे लेकर भाग निकले। और कहीं ऐसे एकाकी, निपट, नीरव, निर्जन कुंज में बैठे, जहॉ मानव की गन्ध न हो। वहॉ न समाज का बंधन हो, न सरकार का, न अपना दबाव

हो, न पराये का, बस हो केवल अनन्त सूनापन। इच्छा की बाधा–हीन प्रगति, और हो बाहु–पाश में दोनों का अटूट और उन्मुक्त गीत।

'तुम नर्तकी हो ? मेरी इन्दु–सी ?' महेन्द्र ने उसके हाथ को दबा लिया अपने हृदय में।

'हूँ' उसने देखते हुये कहा।

फिर भी मैं तुझसे प्रेम करता हूँ, क्यों ?

'यह मेरी भाग्य.....और.....। युवती के होंठ दोनों किनारों पर फैल गये। वह चुप थी मुग्ध–सी।

'तुम्हारा रहस्य क्या है ? बताओ; मैं.....।'

'नहीं ! नहीं !! युवती ने महेन्द्र के हाथ को अपने मुँह पर रखकर छिपा लिया। दोनों सिहर उठे।

•

'हॉ। मैं मजार पर दीपक जलाती रही; तुम कहॉ जाते हो महेन्द्र !

ऐसे ही का.....।'

दोपहर का समय है। छूप में छाया सिकुड़ी हुई वृक्षों के तले है। अस्पताल में शान्ति है। सामने महेन्द्र बैठा है। मिस पंत अपनी कटी हुई अँगुली को देखकर वातायन से न जाने क्या देखने लगती थीं। वे बड़ी देर तक चुप रह जाती हैं। धूप की लहरों में उन्हें मि0 कर्नल रिवाल्वर लिये दौड़ते नरह आ रहे हैं। स्नेहलता और इन्दु के अलक–जाल फैले हैं दूर क्षितिज की छाया में।

'आप क्यों चुप हैं ?'

'कुछ नहीं महेन्द्र !'–मिस पंत चुप हो गई फिर उनकी ऑखें वातायन की ओर थी।–'आज उनके मातृ हृदय में तूफान आया था। भूली हुई इन्दु आज ऑसू बनकर उतर आई थी इनकी ऑखों में। मैंने उसे पाप के जलते हुये तवे पर सेंक दिया था, अब वह जल रही होगी न जाने कहॉ। उसकी प्रतारणा और फटकारें, कितनी मीठीं थीं, काश वह फिर एक बार फटकार जाती।'

'मेरी इन्दु ! मेरी इन्दु ! चीख पड़ी सहसा मिस पंत।

'क्या हुआ; मुझे भी आज कल इन्दु की बहुत याद आ रही हैं' महेन्द्र ने कहा।

'वह होगी, या नही। आह ! उसके प्रति मेरा जघन्य अपराध, इसका भी तो प्रायश्चित नहीं है; महेन्द्र ! ऐसी भी क्या कोई मॉ होगी ? आह ! उसकी शिक्षा, और रूप !' मिस पंत चीख मारकर गिर पड़ी वहीं कोच पर।

'चिंता न कीजिये।' महेन्द्र के उसी युवती का मुख चित्रित हो गया।

'नहीं, महेन्द्र। यदि मेरे मरने से पहले, इन्दु मुझे एक बार फटकार जातीं आह ! मेरे तरूण महेन्द्र; मैंने सोचा था, तुम दोनों को एक छोर में बॉधना; काश कहीं मेरे सपने सच हो जाते।'

'पर आपको इतनी चिंता नहीं करनी चाहिए मॉ।'

'नहीं महेन्द्र, वह मेरी प्रिय इन्दु है। मैंने उसे पाप–पथ पकड़ाया था। वह अब भी पवित्र होगी'–महेन्द्र की भी पलकें भीग गईं। आज इन्दु का प्रेम साकार हो अपना बाहु पाश बढ़ा रहा था। पर इन्दु न जाने कहॉ होगी; यह तो स्वर्णिम अतीत के सपने हैं।' महेन्द्र निःश्वास भरता हुआ मिस पंत के बिखरे हुये बालों को ठीक करने लगा।

•

'लो एक प्याला और।'

'हॉ ! हॉ। जरूर पिलाओ।'

'हॉ भाई मजा तो तभी है।' जगदीश की बातों का समर्थन करते हुय उनके दोनों साथियों ने कहा।

जगदीश के ड्राइंग–रूम में उनके दो अफसर मित्र शोफे पर लेटे हैं। सबके आगे छोटे–छोटे टेबुल हैं' उस पर दो–दो बोतलें और प्याले रक्खे हैं। सबके शोफे पर सिगरेट बिखरे हुये हैं। कमरे में बिजलील की नीली रोशनी हो रही है। वह नाचकर एक क्षण अपने घूँघुरों को रोक, साड़ी समेट एक के पास बैठ जाती। और भरकर एक प्याला पिला देती उनके गले में घुट ! घुट !

'तुम भी शर्बत पियो मेरी रानी।' जगदीश ने कॉपते हुये एक प्याला बढ़ा दिया।

'नहीं, नहीं आप लोग।' वेश्या ने मन्द मुसकान से कहा।

सबकी शर्बती ऑखें खुल पड़ीं। सब कहकहा कर हॅस पड़े।

'वाह ! भाई खूब ! एक हाथ और' जगदीश बाबू !' दूसरे डिप्टी ने कहा।

'चीज भी तो है, एक झपकी लेते हुये दूसरे ने कहा।

वेश्या ने एक और लचक दिया। झनझना उठे उसके घुँघरू। सब झूम उठे उस तान के साथ।–यह था नित्य का मोजरा स्नेहलता के मरने के बाद से। यही हैं जगदीश बाबू, नौकर शाी के एजेन्ट; जग के सुपुत्र, कप्तान के दामाद। यही लोग हैं गोली चलाने वाले, शॉति–रक्षा के एजेन्ट। पिता की ऑखों में यही एक वर था, जिससे कि स्नेहलता की गिड़गिड़ाते हुये भी हाथ पकड़ा दिया गया था। अब वह आज नहीं है। जगदीश बाबू स्वतंत्र हैं अपनी वासना में। कितनी बाजियॉ आ जा रही हैं।

सब बेहोश थे, अपने शोफे पर। वेश्या चली गई। बड़ी देर में सबको होश आया।

'मजा खूब रहा भाई, यह जगदीश बाबू की इनायत है।' सब हॅस पड़े कार पर बैठते हुये।

'कल फिर आयेंगे।

'नहीं भाई, यही तो आफत है। कल मुझे जाना है एक शहर में, दौड़े पर, वहॉ की हालत बहुत खराब है।

'अरे वही महेन्द्र का उत्पात !' एक ने कहा।

'हॉ भाई।.....'

'दाग दो इन चीथड़े वालों को, क्या रक्खा है।'

'वहॉ भी एक चीज है, भाई।' तीसरे ने कहा।

अच्छा, यह बात ! जगदीश ने कहा।

•

हुजूर ! उस तिन मंजिले पर एक चीज है।' डॉक–बॅगले के चौकीदार ने जगदीश बाबू को दिखाते हुये कहा।

'सचमुच !'

'हॉ हुजूर ! पर बड़ी मुश्किल बात है, वह तो किसी से.....।'

'अरे चलो, मैं शहर में इन्तमाजन भेजा गया हूँ, मैं चाहे जो कर सकता हूँ, उसमें क्या ? डिप्टी साहब के पैर बढ़ गये गली की सीढ़ियों की ओर।

अनन्त एकाकिनी, मौन–सी वह देख रही थी बाहर वातायन से। वह शुभ्रवसना नर्तकी थी, उसका साहस क्या है ? महेन्द्र की तस्वीर उसके सामने खिंची थी। वह उसी सुध में भूली थी।

'क्या मैं अंदर आ सकता हूँ ?'

'नहीं' बिना कुछ सोचे–समझे युवती के मुख से ये शब्द निकल पड़े। तब तक उसके पैर कमरे में थे। वह जगदीश था। इन्दु की हत्या करने वाला, रूप को चूसरे वाला सर्प, वासना की मूर्ति सामने था युवती के। वह दो क्षण देखती ही रही आगन्तुक को। वह कहॉ है, यह भूल गई।

'यह लो एक पर्स, बीबी !'

'तुम कौन ?'––युवती एकाएक गंभीर हो गई। उसकी निःश्वासें तेजे चले लगी। डिप्टी साहब कॉप गये। वे कहॉ आ गये हैं ? उनका बॅधा हुआ रिवाल्वर खसक सा गया। नशे में चूर उनकी शर्बती ऑखें ढॅक–सी गईं। युवती का रूप बह सा गया उनकी ऑखों में।

'मैं.....मैं डिप्टी हूँ.....जगदीश.....।' वे बड़बड़ा उठे।

उसने नौकर को पुकारा, इन्हें बाहर करने के लिये।

'अरे ! यह क्या ? मैं खुश कर दूँगा रानी तुम्हें।'

'जबान काट लूँगी, यदि फिर रानी कहा। कुत्ते !' युवती लाल हो गई थी विचारों के तूफान में।

'यह ऍगुठी लो, मैं उपहार लाया हूँ; मैं सच्चा प्रेमी हूँ।'

'चुप ! प्रेम–पथ की कीड़े।' युवती के सामने नीलक की ऍगुठी ढरक गईं उस ऍगुठी पर स्वर्ण अक्षरों में लिखा था 'स्नेहलता' दूसरी ओर 'जगदीश'। आह ! यह स्नेहलता की सुहाग–अंगूठी है। वह देर तक अपलक देखती रही।

'हॉ, पसन्द आ गई, बीबी ! अब एक गीत.....।'

जगदीश के मुख पर पाप के काले धब्बे स्पष्ट झलक रहे थे।

उसकी शर्बती ऑखों में काम–पिपासा उतर आई थी। वह रह–रह के वासना की सुलभ ऍगड़ाइयॉ ले रहा था। 'यह जगदीश है, इसी का रिवाल्वर महेन्द्र के ऊपर दो बार से छूट रहा है, क्या मैं इसी रिवाल्वर से अंत कर दूँ यह कहानी ?'––वह कॉप सी गई। उसने नीलम की अंगूठी रख लिया अपने पास।

'मैं कोई नर्तकी नहीं, तुम चले जाओ मेरे कमरे से।'

'नहीं, नहीं, मैं भर दूँगा तुम्हें, मुझे शहर में कई दिन रहना है।'

'कई दिन ?' युवती ने शान्ति से पूछा–

'हॉ मुझे महेन्द्र को देखना है, अब की बार उसे.....इसी रिवाल्वर से.....।'

'यह रिवाल्वर ! महेन्द्र !!' युवती ने रिवाल्वर ले लिया। जगदीश की ऑखें अधखुली थीं। वह मस्त था अपने रूप में कि इस साकार रानी, कला की स्वरूपा लूट लिया था आज उसे। उसने फेर दिया। अपनी ऍगुलियॉ सितार पर। छिड़ गया। एक अलौकिक गीत। वह अपलक उधर देखते ही देखते बह गया। किसी दुनिया में। वे बड़बड़ाते रहे, युवती ने मन्द मुस्कान से अपना काम पूरा कर लिया। उसने फिर एक बार अपने हाथों से प्याला भर दिया जगदीश के सामने। वह पीता गया, और न जाने कब उसने अपने का सड़क–पर पाया, ऑख खुलते ही।

•

घुल–घुल के जलने वाली शमा में किसी की याद आ रही थी। यह मजार है, जहॉ मन्दस्मित दीपक कब से जल रहा है। यह मजार पद–चिन्ह–सा है, समाज की बलि–वेदी पर एक नारी के उत्सर्ग का। यही शुभ्र मजार इतिहास कहेगा अपना, इसका दीपक अपनी कहानी कहेगा सदियों तक। कुल–ललनाओं का मूल्य क्या है ? उनके इतिहास कितने स्वर्ण–पृष्ठों में हैं यह कहता रहेगा। गलने वाली शमा को देख कहीं रो न देना, ऐ देखने वालों ! यहॉ एक भारत की सती बेटी है जिसका सीना वेध दिया था उसी के पति के रिवाल्वर ने। चूँकि उसके कोमल पैर मातृभूमि सेवा की ओर बढ़े थे। अब कुल–ललनाओं को लिमन फाड़ दिया जायेगा। अब अधिक गुलामी नहीं। तुम्हें चुन लेना है। अपना पति स्वयं हाथ बढ़ाकर। अब तुम्हें एक–एक को झॉसी की रानी बनना है। और आगे बढ़ना है चॉद बीवी की भॉति।

'क्षमा करना स्नेहलता।' दीपक में घृत डालते हुय महेन्द्र ने फिर कहा।

आज महेन्द्र बहुत उदास है। उसे रह–रह के देश के, नर–नारियों की हत्या पर तरह आ रहा है। बिछुड़े हुये पिता की याद उसे आज बहुत आ रही है। काश ! वह एक बार छिन पाता पिता की सुखद गोद में। काश ! वह इन्दु से मिल जाता। बरबस उसकी ऑखों से स्नेहलता के उत्सर्ग ऑसू छलक पड़ते थे।

'सचमुच वह युवती इन्दु की ही भॉति है; वैसी ही लम्बी केश–राशियॉ थीं। वैसही ही उसका सॉचे में ढला हुआ मुख था, वैसी ही उसकी बोली थी। पर इन्दु का मेरे ऊपर इतना स्नेह ? वह कोई अन्य होगी; पर आवश्य उसमें रहस्य होगा।'––महेन्द्र सोचते–सोचते कोच पर बैठ गया।

•

बाहर दुग्ध चॉदनी का अवरण बिछा था। दक्षिण पवन धीरे–धीरे बह रहा था। मजार का दीपक मन्द–मन्द अभी तक जल रहा था। रात्रि का द्वितीय प्रहर था। दिशायें निस्तब्ध थीं। अस्पताल के कमरे में रोशनी हो रही है। रह–रह के घायल चीख उठते थे।

'आह ! आह !!'

शान्त रजली सॉय–सॉय कर रही थीं। बाहर देखने से डर मालूम होता था। महेन्द्र को नींद नहीं आ रही थी। आये दिन घायलों का चित्र, श्मशान पर पड़ी हुई कितनी नंगी लाशें सरकार की बर्बरता, एक–एक करके उसके सामने आती थी।

'महेन्द्र बाबू ! महेन्द्र बाबू !!' किसी ने धीमे से स्वर से बाहर पुकारा।

'हॉ, महेन्द्र ने धीरे से किवाड़ खोल दिया। वह सन्न हो गया। सामने उस भयानक रात्रि में वही युवती खड़ी थी। उसकी स्वॉस तेज चल रही थीं उसके मन में कितनी शंकायें आ गईं।

'अरे ! तुम कैसे ?' यह दूसरा कौन है ?'

'अरे नौकर है, बहुत बड़ी घटना हो गई है, महेन्द्र !' युवती ने कहा।

'क्या ! क्या !!' महेन्द्र ने घबराकर पूॅछा।

'जिले के सभी कॉग्रेस कार्यकता बन्द हो गये हैं; आप सुबह तक.....।'

'फिर क्या' साफ–साफ कहा।'

'आपको सरकार जान से मारने पर तुल गई है, आप अपने को बचाइये।

'अरे ! ऐसा' तुम्हें कैसे.....?''

'मेरे ही घर वही जगदीश आया था शराबी–सा उसने अपने नशे में सारी गवर्नमेंट की स्कीमें पहले ही बता दी।'

'और।'

'मेरे भी घर पर पुलिस का छापा है, मुखबिरों ने कह दिया था आपके बारे में। अच्छा आप बचाइये अपने का अब अहिंसा से काम न चलेगा, लीजिये यह रिवाल्वर।'

युवती के हाथ में रिवाल्वर देखते ही महेन्द्र का सिर घूम गया। 'अरे यह रिवाल्वर कैसे ?'

'इसे भी मैंने छीन लिया है, चुपके से उसकी बेहोशी में। तभी तो वह और सख्त पड़ा है।'

'तो अब क्या किया जाय; घड़ी में दो बजे हैं।' तब तक आराम कर लो सुबह देखा जायेगा।' महेन्द्र ने कहा ।

'युद्ध और निद्रा !' युवती ने कहा। उसके पैर कमरे के बाहर थे।'

'अरे कहॉ ? महेन्द्र ने पूछा।'

'तब तक इतना प्रसिद्ध सार्वजनिक अस्पताल तो देख लूॅ।

'हॉ ! अवश्य, उस कमरे में मिस पंत हैं।'

'मिस पंत ! ओह.....अच्छा वह प्रकाश कैसा। युवती ने उदासी से कहा।

'वही है स्नेहलता की मजार और उस पर जलता हुआ मेरा दीपक।'

उसने खड़े–खड़े अस्पताल को देखा। मजार पर उसकी ऑखें बरबस बरसपड़ी। उसका अंचल छोर गीला हो गया क्षण भर में।

'तुम क्यों रो रही हो ?'

'यह न पूछो और सैनिक।'

'क्यों ?'

'मुझे अपरिचित ही मर जाने दो अपने साथ, इस आजादी की लड़ाई में।

'नर्तकी और आजादी का युद्ध ? मेरे साथ !! मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ ?' महेन्द्र ने स्वंय पूछा अपने से।

'तुम क्यों रो रहे ? बताओ तुम्हें सौगन्ध है, महेन्द्र की।'

'यह हॉस्पिटल भी तोड़ दिया जायेगा–इसी से मैं.....।'

'नहीं, तुम अब भी छिपा रही हो।' महेन्द्र ने उसके हाथों कोपकड़ कर कहा। वह चुप थी बड़ी देर तक। अपलक शून्य अंधेर की ओर वह देखती रही।

•

कितनी भयानक रात्री थी उस दिन की। रह–रह के बिजली कौंध उठती थी। वायु का वेग कितना भयानक था। शुभ चॉदनी और दक्षिण मलय न जाने कहॉ थे। सारा जगत् श्मषान–सा प्रतीत हो रहा था !

'ओह ! महेन्द्र कितना अटल है अपने ध्येय पर। वह न माफी मॉगेगा न हिंसा के शरण में जायगा। उसे कितना मधुर है उसका बन्दी जीवन ओह ! अब स्नेहलता नहीं उसके साथ, अच्छा मैं देखूँगी महेन्द्र की गोली मारने वाले को।'

युवती का छिपा हुआ अमूल्य नारीत्व सहसा चमक उठा महेन्द्र के जेल जाने के बाद। आज तक वह न जाने क्या–क्या थी पर अब उसकी बाहें लोहे–सी है हृदय पत्थर–सा है, धैर्य पर्वत सा है, अब तक उसकी ऑखों में यह था, वह नर्तकी थी, अब उसकी ऑखों में खौलता हुआ रक्त है वह भारत की वीरांगना है। आज वह प्रत्यक्ष रण–चंडी है, वह युद्ध की अट्टहास है। वह देष के लिए महेन्द्र के लिए तलवार चलायेगी छपक–छपक।

'अरे यह क्या ?' दाई चिल्ला उठी।

जल पड़ी धू ! धू!! कपड़ों की होली। उसने फूँक दी क्षण भर में अपनी समस्त पुरानी श्रंगार, पापी विदेषी वस्तुयें। इस लौ के साथ आज जल रहा है नारी का समस्त विकार। आज वह सती सीता होने जा रही है। अब उसने सौगन्ध खा लिया है। महेन्द्र की रक्षा की। काष वह स्नेहलता बन पाती। जिलाधीष के बॅगले पर आज गुप्त मीटिंग हो रही है। सारे अफसरों के बीच महेन्द्र और अन्य कॉग्रेस कार्यकर्ता बैठे हैं।' महेन्द्र के सामने प्रस्ताव रक्खे जा रहे हैं कि वह क्षमा मॉग ले। महेन्द्र अब भी उपेक्षा कर रहा है।

'मि0 महेन्द्र ! जिलाधीष ने कहा, तुम अभी जवान हो, कर्नल के लड़के हो, तुम्हें अच्छी से अच्छीनौकरी मिल जायेगी। छोड़ दो इन बातों को। तुम अबभी क्षमा मॉग लो।'

'महेन्द्र मस्त था अपने विचारों में। वह बैठे हुये अफसरों के मुख पर खरी से खरी बातें कर रहा था।

'गुलामों से भी गुलामी।'

'यह क्या ?' जिलाधीष ने पूँछा।

'यही, कि ऐसे जूठे टुकड़े इन मुँह बाये हुए कुत्तों के मुख सामने डाल दीजिएये।'

सामने जगदीष का मुख उतर गया। सभी अफसर चुप थे। उसमें कितना आत्मबल था, बात कहने के लिये।

'हुजूर ! यह बहुत शोख है, उससे बात करना बेकार है।' जगदीष ने सलाह देते हुये कहा। महेन्द्र चुप था। उसके पास के अन्य कॉग्रेस कार्यकर्ताओं का खून खौल उठा अफसरों की असभ्यता पर।

'बस गाली अपने मुख में रखिये। आप लोग किसी को जलील नहीं कर सकते।'

'देखिये ! आप लोगों को अब भी मैं एक मौका देता हूँ, क्षमा मॉग सकते हैं।'

'मनुश्य से !' वह भी गुलामों से, सो भी ठीकरों पर बिकने वालों से आप लोगों को क्षमा मॉगनी है उन मृतुओं से, जिन्हें आपने किया है। वे बच्चे रोटी–रोटी रटते हुये एक महान प्रष्न से हो जायेंगे ! वे ललनायें अपने सुहाग के लिये तुम्हारे छक्के छुड़ा देंगी। तुम लोगों को तैयार रहना है।'

'देखो जी महेन्द्र ! अगर अब जवान हिलाई, तो उड़ा दूँगा तेरी जबान !' अफसरों के बीच से एक बोली आई। महेन्द्र उबल पड़ा। वहॉ की फिजा महेन्द्र की फटकारों से बदल गई। अफसरों की सभा क्रोध से लाल थी। सड़क पर लोग, जिसमें कुछ स्त्रियॉ भी थीं, नारे लगा रही थीं 'महेन्द्र जिंदाबाद !' महेन्द्र हाथ उठाकर सब जनता को शान्त होने के लिये कह रहा था। सहसा वही युवती सामने बढ़ी चली आ रही थी। महेन्द्र उसी ओर देख रहा था। महेन्द्र ने दूर ही उसे रोक दिया।––सहसा एक धड़ाके की आवाज हुई। महेन्द्र चीख पड़ा 'आह !'––युवती फट पड़ी आवाज पर। उसे पहले से ही सन्देह हो रहा था। घोर चिल्लाहट में वह टूट पड़ी थी सिंहनी की भॉति जगदीष के ऊपर। अपने षिकार के ऊपर वह भी बेहोष हो गई थी।

भयानक श्मषान सी रात्रि का द्वितीय प्रहर। रह–रह के बोल उठता था एक पक्षी 'हूँ, हूँ ?' मानों वह प्रलय को स्वीकार कर उसे निमंत्रित कर रहा है। रह–रह के पत्तियों का खुरक जाना ऐसा प्रतीत होता था, मानो श्मषान पर कोई जानवर किसी पंजर को तोड़ रहा हो। आज किसी की दुनिया उजड़ने जा रही थी।

अस्पताल भरा है महेन्द्र के साथ। बाहर से भी बड़े बड़े डाक्टर आये हैं। नर्सें भी इधर–उधर दौड़ रही हैं। फिर भी वही अस्पताल आज श्मषान सा लग रहा है। मजार पर आज दीपक नहीं हैं। कितनी आहें निकल रही हैं। महेन्द्र को आज भी होष नहीं आई या था। मिस पंत की बेहोषी आज कुछ कम हो आई है, पर उन्हें आज्ञा नहीं है महेन्द्र के पास जाने की।

'मुझे छोड़ दो, मैं देख लूँ उनकी धरोहर को।' मिस पंत चिल्ला उठीं दूसरे कमरे में।

'चुप रहिये। महेंद्र अभी बेहोष है।' डाक्टर ने कहा।

'आह ! मैं जीकर क्या कर रही हूँ ? अच्छा मैं शोर न करूँगी मुझे देख लेने दो महेन्द्र को।' मिस पंत ने याचना की।

'रहने दीजिये; बहुत अच्छे इन्जेक्षन्स दिये जा रहे हैं। घाव बहुत बड़ा है, शायद वह ठीक हो जाय।'

'षायद ? और मेरा महेन्द्र ?' आह ?' वे फिर चीख उठीं।

आज चौथी भयानक रात्रि थी। मिस पंत चुपके से महेन्द्र के पास बैठीं हैं। 'आह। हृदय की यह मन्दगति !––बचाओ मेरे महेन्द्र को। संसार में वह कौन–सी औषधि है ?' उनकी ऑखें वहीं पथरा सी गईं।

'क्या किया जाय, महेन्द्र के शरीर में तो रक्त है ही नहीं।'

'तो फिर लीजिये मेरे शरीर का रक्त।'

'नहीं, कहॉ तक कोई रक्त.....दे सकता है।' हिचकते हुए डाक्टर ने कहा।––परन्तु आज एक नारी, समूची नारी, ने दधीच तथा कर्ण की भॉति स्वयं मिटकर अपने महेन्द्र की रक्षा की। उसका दान, साधारण दान न था। वह था रक्त का दान। अपने जीवन का दान किसी की धरोहर की रक्षा के लिये। उस रात्रि के सूनेपन में नारी का वास्तविक व्यक्तित्व चमक उठा। पुरूष के लिये नारी का अमूल्य उत्सर्ग। नारी का अन्तिम रूप कितना मंगलमय था ?

'अरे। महेन्द्र के बदन में इतना खून कहॉ से !' अन्य डाक्टर सुबह उछल पड़े। महेन्द्र की हृदय –गति ठीक थी। मिस पंत चुप थीं उनकी आंखें सफेद हो चली थी; पर मुस्कान खेल रही थी उनके सफेद ओठों पर। महेन्द्र की ऑखें आज खुल गईं। उसने धीरे से पूछा– 'मैं कहॉ हूँ।'

'मेरी गोद में' लड़खड़ाती जबान से मिस पंत ने कहा।

•

'अब मैं हॅसती हुई मरूँगी; महेन्द्र।' घाव, चिन्ह को चूमती हुई मिस पंत ने कहा। वे सामने पलंग पर लेटी थी, दो नर्सें साथ सेवा में हैं। इन्जेक्षन देने पर भी उनकी दषा खराब होती जा रही है। सारा शरीर सफेद हो गया है। आज मिस पंत कंकाल सी मरण शय्या पर पर हैं। फिर घोर उदासी।

'मैं आपके लिये कुछ नहीं कर सकता मॉ ?' महेन्द्र ने रोते हुए कहा।

'पर मैं सफल हूँ बेटा ? तुम युग–युग जिओ.....पर हॉ....आज कहॉ मिस्टर कर्नल को देख लेती.....। उनकी धॅसी हुई ऑखों में से बरबस न जाने कहॉ से ऑसू बह गये।

'घबड़ाइये नहीं मॉ, कुछ आज्ञा ?'

'हॉ बेटा ? अब तुम अफसरों की गोलियॉ न खाना, वह सामने तुम्हारे पिता का 'रिवाल्वर है' उसे साथ रखना। तुम्हारा अब यदि एक बूँद खून निकलेगा, तो मेरी आत्मारी उठेगी।

'मेरी ! मिस पंत कहॉ ?' दौड़ता हुआ आगन्तुक कमरे में घुस गया। सभी आष्चर्य में थे इस विषाल व्यक्तित्व को देखकर। मिस पंत की पथराई हुई ऑखें ऊपर उठीं। आगन्तुम की ऑखें उस ज्योति से मिल गईं। वह चीख उठी–'मिस पंत।'

मिस पंत के होठों पर फिर न जाने कहॉ से एक मुस्कान दौड़ गई। उन्होंने चलते समय अपनी कटी 'अंगुली' दिखा दी। आगन्तुक लिपट गया चीखकर उस कंकाल से। महेन्द्र स्तम्भित रह गया।

'नमस्ते पूज्य कर्नल ।' कंकाल से अन्तिम बार एक स्वर निकला। महेन्द्र भी लिपट गया उनसे। अजब भयानक दृष्य हो गया था।

मिस पंत की दोनों अंअुजियॉ बॅध गई। उन्मुक्त धॅसी हुई ऑखें, महेन्द्र और कर्नल पर थी। उनके मुख पर हॅसी की अजीब छटा थी। उन ऑखों से ऑसू बह रहा था। मिस्टर कर्नल का भी गर्म ऑसू उसमें मिल रहा था। मिस पंत की केष राषियॉ बिखरी थीं। मृत्यु शय्या पर काले घुॅघराले बालों के बीच उनके सिर की रेखा उज्जवल सी चमक रही थी। देखते ही देखते मिस्टर कर्नल ने अपनी अंगुली चीरकर रंग दी उनकी उज्जवन मॉग को। उनकी साधना पूरी हो गई; मुख खिल उठा। उनके पतले सूखे होंठ किनारे की ओर फैले ही थे। होंठों के बीच मुस्कान खेल रही थी। सभी चुप उन्हें देख रहे थे।

सहसा सामने एक आगन्तुम का प्रवेष हुआ। 'यह क्या ?' महेन्द्र ने पूछा।

'रक्त है; इन्हें जिलाने के लिये ?'

'किसका ?'

'इन्दु का ?'

'अरे ? इन्दु कहॉ? कौन ?

'वही युवती, जगदीष को मारने वाली, जो जेल में है।

'आह ! उसने रक्त पात्र दे दिया महेन्द्र को ?

पर इधर मिस पंत ने अन्तिम सॉस लीं बदन में एक विचित्र सी ऐंठन हुई। मिस्टर कर्नल उस कंकाल को सॅभाले रहे। अन्तिम समय में उनके हाथ मिस पंत के वक्षस्थल पर थे। उनके ऊपर उनके हाथ थे। उनकी ऑखें खुली ही रहीं–

वेदना–मरूस्थल के अनंत प्रसार में पड़ी हुई उनकी अनंत प्यास बुझ गई। मुख अनंत मिलन की तृप्ति तथा गतिहीन अवस्था में सदा के लिये खुला ही रहा।

•

'उसने भी मेरे जीवन के लिये रक्त–दान किया है' और वह बन्दी है।'

'क्या है बेटा ?' मि0 कर्नल ने पूछा।

इन्हीं की एकमात्र इन्दु ! उसने मेरे गोली लगने पर मेरे मारने वाले से बदला लिया था।

'ओह ! इतनी बहादुर !'

'बहुत संभव है, उसे भी सरकार मरवा न डाले।' महेन्द्र चिंतित हो गया। वह अपलक पिता की ओर देखने लगा।

'घबड़ाओं नहीं ? को हम निकाल लेंगे जेल से।'

•

आज दोनों की मजार पर अलग–अलग दीपक जल रहे हैं।

पिता ने मिस पंत की मजार पर ऑसू चढ़ाया, महेन्द्र ने 'स्नेहलता के।––पिता–पुत्र की अब अजब दुनिया हो गई है। न कल के मखमली गद्दे न आराम। वे एकाकी चल पड़े घोर अँधेरे में।'

काली निषा का अन्तिम प्रहर था। शॉति का अखंड साम्राज्य दूर से धीवरों की बोलियॅ। आ रही थीं। पहरे ढीले पड़ चुके थे। बन्दूकें ढीली थीं सिपाहियों के हाथें में। सभी सो रहे थे। बाहर एक धमाके की आवाज हुई। इतनी ऊॅची चहारदीवारी के उस पार। बिगुल बज गया तुमुल नाम से। शोर हो गया–'बन्दी भगा !' खुल पड़े सवार, दगने लगी बन्दूकें घोर अँधेरे में। उधर से भी रिवाल्वर की गोलियॉ आईं। सैनिक आगे न बढ़ सके।

प्रातः काल हुआ। प्राची के अंचल को टाल कर उषा ने झॉकी दी। जग गई कल की स्मृतियॉ। शोर हो गया–'सेन्ट्रल जेल से वह खूनी युवती भग गई।' पेपर में छप गया।–

'क्रान्तिकारियों का सेन्ट्रल जेल पर हमला–एक बंदी युवती गायब।'

•

शाम हो गयी। अस्पताल में गया हुआ पथिक रो उठा लुटते हुये अस्पताल के श्रंगार को देखकर। पक्षी रो उठे–मजार सूना हो गया। अस्पताल आज श्मषाल सा है। यहॉ पुलिस का पहरा है। कल तक मषीनें आ जायेंगी इसे ढहाने के लिये। असंख्य रूपये की औषधियॉ और सामान लद चुके हैं मोटरों पर। पहरा बड़ा तेज हो रहा है। मिस पंत की आत्मा शायद उसे न देखती हो। वह शान्ति थीं अपने मजार में !

रात का अन्तिम प्रहर है। प्रहरी सावधान रहते हुये भी अब झपकियॉ ले रहे हैं। पुलिसों की छावनी कारों के किनारे–किनारे लेटी थी। एक सैनिक टहल–टहल कर पहरा दे रहा था। अजब भयानक था वह दृष्य। सूने मजार पर एक क्षीण आहट हुईं पर कोई मानव–चिन्ह न दिखाई दिया। सहसा महार पर दो बत्तियॉ जल उठीं। वहॉ आलोक हो उठा। प्रहरी के कान खड़े हो गये। 'नही कोई अवष्य है' उसने अपनी बन्दूक सॅभाली। तब तक सनसनाती हुई गोली उसे वेध गई। निस्तब्ध रजनी गूॅज उठी ठहाक् ठहाक् शब्दों से। लेटे हुये सैनिकों के कान के पर्दे फटे। वे उठ चले। तब तक लारियॉ चूर हो चुकी थीं, गोलों से औषधियॉ उड़ गईं। सैनिकों की झर्रियॉ उड़ गईं। काल ने अट्ठास किया। मजार से मानों एक शब्द आया– 'षाबाष ! शाबाष !!'

•

'अब आप आराम करिये।'

'नहीं तुम' महेन्द्र ने कहा उस जंगल में।

'जरा चुपके से बोलिये, इस जंगल के किनारे ही बस्ती है।' इन्दु ने फुसफुसाते हुये महेन्द्र से कहा। दोनों मि0 कर्नल के पैर दाब रहे थे ?

'क्या सब छिन गया, तो बोलना भी बन्द कर दूँ।'

'नहीं, वह हॅसती हुई बोली, आपका अधिकार है बोलने का पर कितना बड़ा कर्तव्य है हम लोगों पर। थोड़ी–सी खबर पाते ही सरकार घेर लेगी, देखो कितने बड़े–बड़े सी0आई0डी0 लगे हैं।'

'तो कब तक हम लोग इस तरह रहेंगे ?'

'जब तक कि देष में साम्राज्यवादी लुटेरे हैं। फिर आपको तकलीफ किस चीज की है, मैं हूँ, पिता जी है, खुला हुआ प्रकृतिस्थल है।' इन्दु मुस्करा रही थी। छनती हुई चॉदनी में महेन्द्र अपलक देख रहा था इन्दु को।

'तुममें किना बल और पौरूष आ गया है इन्दु ?'

'आपके सम्पर्क से।'

'परन्तु तुम ! और यह भयनक साधना ?'

'क्या मैं नारी हूँ इसी से ? दार्षनिकों ने गलत कहा है? कि 'निर्बलता ही स्त्रीत्व है।–मैं कुछ और हो गई हूँ, तुम्हारे साथ महेन्द्र !'

महेन्द्र ने चुपके से उसका हाथ दबा दिया, उसके हाथ की अंगूठी उसने निकाल ली।

'अरे ! यह अंगूठी कैसी ?'

'क्यों, क्या है ? इन्दु ने पूछा–

अरे यह तो स्नेहलता की 'सुहाग अॅगुठी' है।

'तभी तो मैंने इसे पूज लिया है।'

'तुमने बहुत बड़े–बड़े काम किये हैं, इन्दु !'

वह चुप थी। उसने धीरे से चूम लिया महेन्द्र के मस्तक का घाव। दोनों सिहर उठे। मि0 कर्नल ने अॅगड़ाई की। महेन्द्र और इन्दु सहम–से गये।

'कितनी रात्रि है इन्दु ?'

'यह अन्तिम प्रहर है। आप अभी आराम करिये।'

'मैंने अभी एक स्वप्न देखा है इन्दु।'

'कहिये क्या'–?

'षहनाई बज रही थी। कोठी में तोरण लटक रहे थे। खूब सजावट थी। तुम दोनों एक अंचल में बॅधे हुये मिस पंत के किनारे घूम रहे थे। मैं दूर खड़ा था। मिस पंत सहसा चीखकर बेहोष हो गिर पड़ीं। मैं उन्हें सॅभालने दौड़ा–उन्होंने संकेत किया–उस सुन्दर जोड़ी को देखो तब तक मेरी ऑखें खुल गईं। इन्दु सिर नीचा किये सुन रही थी। महेन्द्र चुप था।

'अच्छा अब तुम दोनों जाओ, मुझे कुछ फूलों की आवष्यकता है।' दोनों हथियार बॉधे चल पड़े।

•

प्रातः काल की किरणों फूटी। कोमल रष्मियों से रंग उठा प्रकृति का स्वर्णिम अॅचल। मि0 कर्नल ने उसी नीले अनन्त आकाष के नीचे इन्दु और महेन्द्र की अॅजुलियों को भर दिया। दोनों का अॅचल एक दूसरे से बॅधा था। दोनों की ऑखें नीचे थीं।–इन्दु ने सहसा अपने अंचल–छोर से एक वही नीलम की अॅगुठी पहना दी 'महेन्द्र' की अॅगुठी में। महेन्द्र ने उसे गौर से देखा। एक ओर झलक रहा था। सुन्दर नाम 'स्नेहलत' दूसरी ओर 'महेन्द्र' चकित था इस अॅगूठीको देखकर।

'तुम्हारे विचार कितने ऊॅचे हैं, इन्दु !'

वह मुस्करा रही थी।

•

'मेरा महेन्द्र दो ! मेरा महेन्द्र दो !!'

उमड़ती हुई जनता ने तुमुल स्वर में कहा। पूरे जिले में हड़ताल चल रही है। पूरे वातावरण में आग–सी फैली है। जनता का असन्तोष सीमा पार कर गया है। सरकार डर गई थी अपनी बर्बरता से। हर विभाग में हड़ताल है। जनता सब काम रोककर अपना स्वर उठा रही है महेन्द्र के लिये–इधर आये दिन सरकारी चीजों पर डाके पड़ते थे। न जाने कितने क्रान्तिकारियों का गिरोह बन गया है। जहॉ सुनिये, वहीं गाड़ी लूटी गई, खजाने पर धावा हुआ, आफिस फूॅका गया। सैनिक लोहा मान चुके थे इन क्रान्तिकारियों से।

सरकार के सामने कोई रास्ता न था। घायल जनता 'महेन्द्र' की मॉग कर रही थी। जिला तभी शान्त होगा जब महेन्द्र आयेगा। सरकार दमन करते–करते विवष हो गई। क्रान्तिकारियों का गिरोह बढ़ता जा रहा था। सरकार ने दूसरे दिन गजट में दे दिया–

'महेन्द्र को सरकार निमंत्रित करती है।'

•

जिले भर में आज दीवाली है। महलों से लेकर झोपड़ियों तक में बच्चे से लेकर बूढ़े तक खुषी से नाचने लगे। फहरा उठा तिरंगा झण्डा सबके हाथों में। मलय ने स्वागत किया। पृथ्वी पुलक उठी। हॅस पड़े बच्चे, नाच उठे जवान, नाच उठी नारियॉ अपने घरों में स्वागत मंडल में तीनों मूर्तियॉ पुष्पों से ढॅक गई। थैलियों का ढेर लग गया। फिर से अस्पताल बनेगा।

शाम को अस्पताल खंड के सामने फिर से मजार पर दो दीपक जल उठे जिनके अन्तराल में नारी के दो पवित्र रूप थे। नारी के एक रूप में जैसे अथाह समुद्र बल खा रहा था, जिस पर पूर्णिमा की वर्षा होती हो। दूसरी की छवि में मलय की सुगंधि और दूध जैसी पावनता थी।